Entered
8.11.46
CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वर्ष २ जनवरी १९४६ अंक १

लोकवार्त्ता

जनता के रहन-सहन, रीति-रिवाजों, उत्सवों,
धार्मिक-विश्वासों और संस्कारों तथा लोक-साहित्य
और लोक-कलाओं के अध्ययन की
त्रैमासिक पत्रिका

A Quarterly study of Anthropological Science & Folklore with Special Reference to Bundelkhand.

संपादक
कृष्णानंद गुप्त

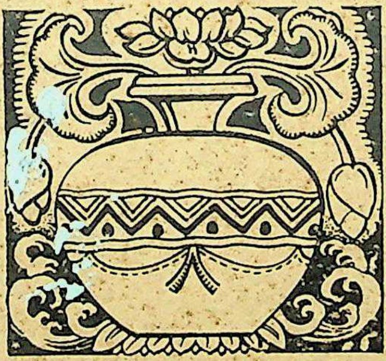

लोकवार्त्ता परिषद्
टीकमगढ़
[मध्यभारत]

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लोकवार्त्ता

विषय-सूची

१	भारतीय लोककथाएँ और उनके अँग्रेज़ी संग्रह	डा० वैरियर एलविन डी० एस-सी० (ऑक्सन)	१
२	स्व० रायबहादुर शरच्चन्द्र राय	श्रीगणेश चौबे	१३
३	मधुरावली (एक बुन्देलखंडी लोकगीत)	श्रीमधुसूदन द्विवेदी 'साहित्यरत्न'	२२
४	बुन्देलखंड के लोक-विश्वास	श्रीहरगोविन्द गुप्त, श्रीचन्द्रभानु विशारद, श्री रामस्वरूप योगी	२६
५	छक्का-चपेटा	श्रीरामस्वरूप योगी	४१
६	हँसने का कारण (एक बुन्देलखंडी कहानी)	श्रीशिवसहाय चतुर्वेदी	४६
७	जाल-कौमुदी	श्रीकृष्णानंद गुप्त	५७
८	महामहिम लोकजीवन	श्रीवासुदेवशरण अग्रवाल एम० ए०, पी-एच० डी०	६४
९	चिट्ठी-पत्री, सूचनाएँ और जिज्ञासा		६७
	(१) वैश्य जाति में दसा और बीसा	श्रीकस्तूरमल बाँठिया	
	(२) पोपाबाई	श्रीरविशंकर पाठक	
	(३) उरदबाज़ार	श्रीवासुदेवशरण अग्रवाल	

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भारतीय लोक-कथाएँ
और
उनके अंग्रेज़ी संग्रह

डा० वैरियर एलविन डी० एस-सी० (आक्सन)

सुप्रसिद्ध अमेरिकन नृशास्त्रवेत्ता नार्मन ब्राउन का अनुमान है कि अब तक भारतवर्ष और उसके पड़ोसी देशों—लंका, तिब्बत, बर्मा, मलाया आदि की लगभग ३००० कहानियाँ मुद्रित रूप में पाश्चात्य पाठकों के लिए सुलभ हो चुकी हैं।❀ इनमें लंका की ३१०, संथाल परगना की २३०, पंजाब की ३०० और मध्यभारत की लगभग ५० हैं। मैंने अपने 'फोकटेल्स ऑफ़ महाकोशल' के संग्रह में मध्यप्रदेश की १५० कहानियाँ संगृहीत की हैं। ५५ मेरी अन्य रचनाओं में हैं। यदि इनको भी ऊपर की संख्या में जोड़ दिया जाये तो मध्यभारत की कुल मिलाकर २५५ कहानियाँ हो जाती हैं।

पर निस्संदेह यह समझना ठीक नहीं होगा कि ये सब ३००० कहानियाँ एक दूसरे से भिन्न और निराली हैं। भारतीय कहानियों की परम्परा बहुत प्राचीन है। काल के रंध्रों से छनकर वे इस देश में सर्वत्र फैल गई हैं। यहाँ तक कि सभ्यता से बहुत दूर जंगलों में रहनेवाली आदिम जातियाँ भी उनके प्रभाव से अछूती नहीं बची हैं। हिन्दू कथाओं के मूल अभिप्रायों ने उन पर भी अपना असर डाला है। इस विषय में ब्लुमफ़ील्ड का कहना है कि अन्य स्थानों की अपेक्षा भारत में यह बात विशेष रूप से देखने में आती है कि पूरी की पूरी कथाओं अथवा उनके प्रमुख लक्षणों की निरन्तर पुनरावृत्ति होती रहती है। उदाहरण के लिए, प्राचीन वेदों के आख्यान प्रायः अधिक विस्तार के साथ काव्यों, नाटकों और कथा-संग्रहों में पुनः अवतरित होते हैं। पचतन्त्र-जातक की कोटि की उपदेशमयी और

❀ मेरी समझ में यह संख्या अधिक होनी चाहिए।—लेखक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दृष्टान्तमूलक कहानियों के साथ कथा-साहित्य की एक नवीन और प्रबल बाढ़ आती है। बुद्धघोष-कृत धम्मपद और अवदानों की टीका में आई हुई कहानियों ने जातक कथाओं को समृद्ध बनाया। इन्हीं के समकक्ष जैन आवश्यक साहित्य के टीकाकारों की रचनाएँ एवं देवेन्द्र चरित्र सदृश कृतियाँ चलती हैं। इन दोनों के बीच दंडी, बाण और सुबन्धु जैसे कवि आते हैं। इन महाकवियों ने अपनी कथाओं को प्रबंध काव्य की एक अनुपम अलंकारमयी शैली में उपस्थित किया। तत्पश्चात् वृहत्कथा ग्रन्थों एवं उनके समतुल्य अन्य कथा-कहानियों के रूप में कुछ अधिक लौकिक एवं शुद्ध मनोरंजन की दृष्टि से लिखे गये कथा-साहित्य का सृजन होता है। (यद्यपि उपदेशमूलकता को उसमें पूर्ण रूप से नहीं त्यागा गया) इस श्रेणी के साहित्य में वृहत्कथा के तीन प्रसिद्ध अनुवाद कथा सरित्सागर, वृहत्कथा मंजरी एवं वृहत्श्लोक संग्रह तथा वेताल पंचविंशति, विक्रमचरित और शुक सप्तति के विभिन्न पाठ सम्मिलित हैं। इसके उपरान्त ही, जहाँ तक शैलियों की नवीनता का सम्बन्ध है, चरितों और प्रबन्धों की एक अजस्र धारा प्रवाहित होती है। जो ब्राह्मण धर्मानुयायी पण्डितों की लेखनी से उद्भूत होकर बहुप्रतिभा संपन्न जैनों की क्रियाशीलता से साहित्य-सृष्टि के एक महासमुद्र का ही रूप धारण कर लेती है।

गत एक शताब्दी के भीतर भारतीय लोक-कथाओं की सेवा में बड़े परिश्रम का परिचय दिया गया है, और कुछ अतीव सुन्दर साहित्य की सृष्टि हुई है। अब तक के प्रकाशित कहानी-संग्रहों के विषय में ब्लुमफ़ील्ड का पुनः कहना है कि 'पिछले चालीस वर्षों में यूरोपीय तथा भारतीय लेखकों में मौखिक कहानियों के संकलन के लिए एक होड़-सी लगी रही है और निस्सन्देह भविष्य में भी भारत के एक छोर से दूसरे छोर तक और भी कहानियाँ संकलित होंगी। अवश्य ही इन कहानियों में संस्कृत साहित्य की प्राचीन कथाओं की प्रतिध्वनि गूँजती रहती है। यह कहना कि उनमें अपनी कुछ स्वतंत्र प्रकार की सामग्री है अथवा नहीं, अर्थात् ये वही पुरानी कहानियाँ हैं या नहीं जो कि किसी भी भाषा में लिखी न जाकर मौखिक रूप में ही प्रचलित रहीं, कहना बड़ा कठिन है। किन्तु संस्कृत साहित्य की प्रायः सभी प्रकार की कहानियों अथवा अभिप्रायों की चर्चा के सिलसिले में वे एक बहुत बड़ी संख्या में उत्साहपूर्वक हमारे सामने आती हैं। हिन्दू-कथाओं का पुनः संस्कार, अर्थात् पुरानी प्रचलित कथाओं को दुहराकर लिखने का अभ्यास भारत के विशाल

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रदेश में ही सीमित नहीं रहा, अपितु बौद्ध धर्म के प्रचार के साथ ये कहानियाँ मध्य एवं पूर्वी एशिया में, सबकी सब नहीं तो, अधिकांश अवश्य पहुँच गईं। अतः जिसे हम भारतीय कथा-साहित्य कहते हैं वह वास्तव में एशियाई कथा-साहित्य—तिब्बती, मंगोली, सुदूर भारतीय, चीनी साहित्य ही है। और यहाँ इस सर्वविदित तथ्य का तो मैं उल्लेख ही नहीं कर रहा हूँ कि हिन्दू-कथाओं के अनेक संग्रह एवं फुटकल कहानियाँ पश्चिमी एशिया तथा यूरोप में भी पहुँची हैं, जैसा कि जर्मन विद्वान् बेन के और उसके समकालीन पण्डितों तथा अब तक के तमाम अनुयायियों ने सिद्ध किया है। यह तथ्य यद्यपि भारत अथवा भारतीय कहे जानेवाले प्रदेश से प्रत्यक्षतः कोई सम्बन्ध नहीं रखता, किन्तु फिर भी एक दूसरे रूप में वह हमारे लिए उतना महत्वपूर्ण तो है ही।

'इन कहानियों के प्रमुख अथवा विशेष लक्षण जिन्हें हम 'अभिप्राय' कहते हैं, भारत में सर्वत्र फैले हुए हैं, और नित्य नये ढंग से उनका प्रयोजन होता रहता है। सभी स्थलों पर हम देखते हैं कि कथक अथवा लेखक अभिप्रायों की एक पूरी माला को, जिसकी तुलना हम गुरियों की माला से कर सकते हैं, हाथ में लेता है और उसे इस प्रकार छिन्न-भिन्न कर डालता है कि गुरिये सब तरफ़ बिखर जाते हैं; तत्पश्चात् उनको वह एक नये सिरे से पिरोता है। इस प्रकार भारतीय कथा-साहित्य एवं उसके सहायक अंगों में कब, कौन सा अभिप्राय, किस समय, किस स्थल पर, और किस सिलसिले में पुनः प्रकट हो उठे, इसका कुछ ठीक नहीं।'

अब यहाँ भारतीय लोक-कथाओं के अब तक के प्रकाशित कुछ मुख्य संग्रहों पर एक दृष्टि डाली जाये। किसी एक प्रान्त के मौखिक साहित्य पर पृथक् रूप से विचार करना तो असंभव है, उचित यही होगा कि सामूहिक रूप से उसे देखा जाये।

इस प्रकार के कथा-साहित्य संग्रह का प्रथम महत्त्वपूर्ण अवसर उस समय आया जबकि सर रिचार्ड टैम्पल ने सन् १८६६ ई० में रेवेरेंड एस० हिस्लप के लेखों को सम्पादित करके प्रकाशित किया। ये लेख मध्यभारत की आदिम जातियों से सम्बन्ध रखते थे। इनमें एक कहानी छापी गई और उसके साथ उसका मूल भी दिया गया। इस प्रकार एक सारगर्भित लोक-कथा को साहित्यिक रूप में छापने का यह प्रथम गम्भीर प्रयास था। किन्तु दुर्भाग्यवश हिस्लप के इस प्रशंसनीय उद्योग में फल नहीं लगे, सम्भवतः इसलिए कि कहानी को उपस्थित करने का ढंग आकर्षक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नहीं था और लेखनशैली भी विद्वत्तापूर्ण होने के कारण कुछ आतंकजनक बन गई। परन्तु इसके दो वर्ष उपरान्त ही मिस फ्रेयर लिखित 'ओल्ड डैकन डेज़' (दक्खिन के बीते दिन) नाम से कहानियों का एक छोटा अथच मधुर संग्रह प्रकाशित हुआ। वह नीरसता के दोष से सर्वथा मुक्त था। तुरन्त ही भारत के समस्त संग्रहकर्त्ताओं का ध्यान उसकी ओर आकृष्ट हुआ। तब से यूरोप की अनेक भाषाओं में उसका अनुवाद हो चुका है। इसके तीन वर्ष बाद, सन् १८७१ में जातितत्त्व के अन्वेषण-क्षेत्र में दो महत्त्वपूर्ण घटनाएँ घटित हुईं। डाल्टन ने तो अपनी बढ़िया पुस्तक Descriptive Ethnology of Bengal (अर्थात् बंगाल का जातितत्त्व निर्णय) प्रकाशित की, और डैमन्ट ने पुरातत्त्व और इतिहास के सुप्रसिद्ध पत्र 'इन्डियन एन्टी क्वेरी' में बंगाल की लोक कथाओं को प्रकाशित करना प्रारम्भ किया। यह कार्य वे अपनी मृत्यु-पर्यन्त, अक्टूबर सन् १८७९ तक, नियमित रूप से करते रहे। 'इन्डियन एन्टी क्वेरी' में भारत के विभिन्न प्रान्तों की कहानियाँ लगातार कई वर्ष तक छपती रहीं। किन्तु संग्रह के रूप में यदि कोई उल्लेखनीय पुस्तक हमारे सामने आई तो वह थी रेवेरेंड लालबिहारी दे की 'फोकटेल्स ऑफ़ बेंगाल', जो सन् १८८३ में प्रकाशित हुई। दे साहब ने अपनी पुस्तक रिचार्ड टैम्पल को समर्पित की, जिन्होंने अगले वर्ष स्वयं ही अपनी पंजाब की लोक-कथाओं के संग्रह का प्रथम भाग प्रकाशित किया। उसके एक वर्ष बाद टैम्पल ने श्रीमती एफ़० ए० स्टील के सहयोग से 'वाइड एवेक स्टोरीज़' नाम से कहानियों का एक संग्रह सामने रक्खा, जो बहुत सुन्दर बना है। वह इसलिए भी अधिक महत्त्वपूर्ण है कि उसमें लेखक-द्वय ने उस समय तक की प्राप्त समस्त कहानियों का अध्ययन करके इसमें वर्णित घटनाओं को श्रेणीबद्ध रूप से प्रकाशित किया। उसी वर्ष नरेश शास्त्री ने 'इन्डियन एन्टी क्वेरी' में छपी अपनी कहानियों का एक संग्रह प्रकाशित किया। उसमें उन्होंने सब जगह अपने परिश्रम का जैसा परिचय दिया है वैसा वैज्ञानिक अध्ययन और खरेपन का नहीं।

सन् १८९० में डब्ल्यू क्रुक ने अपने 'नार्थ इन्डियन नोट्स ऐण्ड क्वेरीज़' नामक पत्र का प्रकाशन आरंभ किया। क्रुक शायद भारत के सर्वश्रेष्ठ लोकवार्ता-शास्त्री थे। उनके इस पत्र में अनेक कहानियाँ छपीं। इसके कुछ वर्षों बाद ही रेवेरेंड ए० कैम्पवेल एवं रेवेरेंड जे० एच० नोलीज़ इन दो प्रसिद्ध मिशनरियों ने क्रमशः संथालों और काश्मीर की कहानियों का संकलन-कार्य प्रारम्भ किया। वर्त्तमान

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शताब्दी के प्रथम दशक में आर० एस० मुकर्जी की 'इन्डियन फोकलोर' श्रीमती ड्रकौट की रोचक 'शिमला विलेज टेल्स' और रेवेरेंड सी० स्विनर्टन की 'रोमान्टिक टेल्स फ्रोम पंजाब' नामक महत्वपूर्ण रचनाएँ प्रकाशित हुईं। स्विनर्टन की इस पुस्तक के १९०८ वाले संस्करण में उनकी पहले की सभी कहानियाँ आ गई हैं। सन् १९०९ में सी० एच० बोम्पस ने, जो कि इंडियन सिविल सर्विस के आदमी थे, रेवेरेंड ओ० बौडिंग द्वारा सङ्कलित संथाली कहानियों का अनुवाद प्रकाशित किया। इसकी गणना हम अब तक के प्रकाशित श्रेष्ठ संग्रहों में कर सकते हैं। पुस्तक बिना टिप्पणियों के एवं नाम मात्र की भूमिका के साथ प्रकाशित हुई। किन्तु उसकी प्रामाणिकता इतनी स्पष्ट थी, और अनुवाद भी इतना सुन्दर, सरल और स्वाभाविक हुआ कि इस प्रकार के अन्वेषण-कार्य के लिए वह आज भी एक आदर्श है। प्रथम महायुद्ध के कुछ ही वर्ष पूर्व कहानियों की कई पुस्तकें प्रकाशित हुईं। उनमें से कुछ तो, जैसे एम० कुलक की 'बंगाली हाउस होल्ड टेल्स' और शोभना देवी की 'ओरिएन्ट पर्ल्स' मूल्यवान् हैं किन्तु शेष अधिकांश साधारण और निरर्थक-सी हैं। इस समय का सबसे महत्वपूर्ण संग्रह-ग्रन्थ पार्थर का 'विलेज फोकटेल्स ऑफ सीलोन' है, जो तीन भागों में प्रकाशित हुआ। इसमें 'वाइड एवेक स्टोरीज़' के आदर्श पर संसार के विभिन्न देशों की कथाओं के साथ सीलोनी कथाओं का साम्य निर्देश किया गया है।

वर्त्तमान समय में लोक-कथाओं के संग्रह के प्रति लेखकों का उत्साह बहुत कुछ कम हो गया दीखता है। उसके स्थान पर अब वे कहानियों के विद्वत्तापूर्ण अध्ययन और अन्वेषण में ही अधिक दत्तचित्त हैं। कहानियों पर शास्त्रीय दृष्टि से बहुत कुछ लिखा गया है। पेंजर द्वारा सम्पादित टॉनी के 'कथा सरित्सागर' और ब्लुमफ़ील्ड के स्कूल के अमेरिकन विद्वानों की प्रशंसनीय रचनाओं तथा 'मैन इन इन्डिया' (Man in India) और बिहार उड़ीसा रिसर्च सुसायटी के जर्नल में प्रकाशित अनेक छोटे-बड़े लेखों द्वारा भारत की प्राचीन कथाओं एवं देहाती कहानियों के साथ उनके संबंध पर एक नवीन प्रकाश पड़ा है। दुर्भाग्य से नृशास्त्रवेत्ताओं ने (आसाम के सिवा) लोक-कथाओं के संग्रह में विशेष रुचि नहीं दिखाई है। शरच्चन्द्र राय के ग्रन्थों में कुछ कहानियाँ मिलती हैं। किन्तु उनका अनुवाद बहुत अच्छा नहीं हुआ है। भारतीय इथनोग्राफिक सर्वे (जातितत्त्व विषयक सर्वे) की बड़ी-बड़ी जिल्दों में मुश्किल से एक दर्जन कहानियों को स्थान मिला है। ग्रिगसन ने अपने माड़िया गोंड़ों पर लिखित ग्रन्थ में केवल दो कहानियाँ दी हैं, सो भी लोक-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कथाओं को प्रकाश में लाने के उद्देश्य से नहीं, बल्कि भाषा संबंधी नमूना उपस्थित करने के विचार से।

दूसरी ओर, कुल मिलाकर देखा जाये तो भारतीय लोक-कथाओं का एकत्र कलेवर अनाकर्षक नहीं है। उसमें विविध प्रकार की कहानियों का समावेश हुआ है। दृष्टान्त भी, आख्यान भी, देश और पात्र संबंधी किंवदंतियाँ भी, और पद्यमय गाथाएँ भी, इन सभी के नमूने आपको उसमें मिलेंगे। परन्तु निस्संदेह उसमें कुछ गंभीर दोष भी हैं।

विशेषज्ञ लोग अपने पाण्डित्यपूर्ण ग्रन्थों में जिन कहानी-संग्रहों का अत्यंत श्रद्धापूर्वक नामोल्लेख किया करते हैं उनमें से दो-चार नहीं, बल्कि अधिकांश ऐसे हैं कि जिनकी रचनाएँ साधारण पाठकों के मनबहलाव के लिए ही हुई हैं। उदाहरण के लिए, अपने कहानी-संग्रह के विषय में स्विनर्टन कहते हैं कि, उनका उद्देश्य 'जीवन के बोझ को हलका करना, दुखों पर परदा डालना या मुस्कान पैदा करना' है। अन्य बहुत से संग्रहों का भी यही लक्ष्य रहा है। किन्तु जिस रचना का उद्देश्य वैज्ञानिक न हो, संभव है कि उसका आधार भी वैज्ञानिक न हो। ऐसी किताब की कोई गारंटी नहीं हो सकती। अधिकांश कथा-संग्रहों पर भावुकता का गहरा परदा पड़ा हुआ है। किसी एक भारतीय कहानी को, जो कि बहुधा यथार्थ और सीधी सादी होती है, अंग्रेज़ बालकों के मनबहलाव की रोमान्टिक कहानी में बदल देना, और उसमें मनमाने नामों का समावेश कर देना, देखने में भले ही अच्छा मालूम हो, किन्तु उसके औचित्य में तो सन्देह ही रहेगा।

हमारे अधिकांश कहानी-संग्रहों में नामों, स्थानों, तिथियों और भाषा के सही हवाले की बड़ी उपेक्षा की गई है। वे किस भाषा से, कब, किस जगह और किस प्रकार लिखे गये, इसका कोई उल्लेख उनमें नहीं हुआ है। किन्तु इस विषय में 'ओल्ड डैकन डेज़' की लेखिका हमारे सामने एक प्रशंसनीय उदाहरण उपस्थित करती हैं। मिस फ्रेयर बंबई के गवर्नर सर बार्टल फ्रेयर की पुत्री थीं। उन्हें इस बात का कोई दावा नहीं कि उनकी कहानियाँ देहातियों या आदिम जातियों के बीच से ली गई हैं। कहानियों के संग्रह का पूरा विवरण उन्होंने पुस्तक में दिया है। वे लिखती हैं कि, जब कभी वह अपने पिता के साथ महाराष्ट्र देश में दौरे पर जाती थीं तो उनकी 'देशी आया' उनके साथ चलती थी। कैम्प में उसके सिवा उनकी और कोई साथिन नहीं थी। अक्सर दिन काटना मुश्किल हो जाता था। तब वह अपनी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

टूटी-फूटी अंग्रेज़ी में उनको कहानियाँ सुनाया करती थी। उनमें से ही कुछ का संग्रह उन्होंने यहाँ किया है। दुर्भाग्यवश मिस फ्रेयर की इस सरल स्पष्टवादिता का बहुत ही कम लेखकों ने अनुकरण किया है। रेवेरेंड लालबिहारी दे-जैसे लेखक भी हमको कहानियों की संग्रह-पद्धति के विषय में अंधकार में छोड़ देते हैं। वे लिखते हैं कि, यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि बाल्यावस्था में एक बूढ़ी औरत से उन्होंने 'हज़ारों' कहानियाँ सुनीं, किन्तु वे सब उनके मस्तिष्क में इस तरह गड्डबड्ड हो गईं कि एक कहानी का पैर दूसरे के सिर से और तीसरे का सिर चौथे के पैर से जुड़ गया। बाद में एक बंगाली ईसाई औरत से उनकी भेंट हुई, जिसने बचपन में अपनी दादी से अनेक कहानियाँ सुनी थीं। इसी प्रकार कुछ कहानियाँ उनको एक वृद्ध ब्राह्मण, कुछ एक वृद्ध नाई और कुछ एक वृद्ध नौकर से भी प्राप्त हुईं। इनमें से किसी को अंग्रेज़ी का ज्ञान नहीं था। सबने अपनी कहानियाँ बंगाली में ही सुनाईं। किन्तु हमें इन बातों का कोई पता नहीं चलता कि ये कहानी सुनानेवाले कौन थे, कहाँ के थे, और वे शिक्षित भी थे या नहीं, अथवा यदि उनमें कोई और विशेषता थी तो वह क्या? श्रीमती ड्रकौट भी इस विषय में तद्वत् मौन हैं। वे कहती हैं कि, कुछ कहानियाँ तो उन्हें 'डाउन कन्ट्री' (पहाड़ों के निम्न प्रदेश) से प्राप्त हुईं और कुछ शिमला ज़िले की कृषक औरतों से। कहानियों को उन्होंने जैसा सुना यथासंभव वैसा ही पेंसिल से लिख लिया। इससे श्रीमती ड्रकौट की कहानियों की प्रामाणिकता में अवश्य विश्वास जन्मता है। किन्तु उनके मूल स्रोत के विषय में यदि उन्होंने कुछ और सूचनाएँ हमें दी होतीं तो उससे अधिक लाभ होता। पर शेख़चिल्ली की तुलना में दे और ड्रकौट ने फिर भी बहुत लिख दिया है। शेख़चिल्ली ने तो अपने कहानी-संग्रह 'फोकटेल्स ऑफ हिन्दुस्तान' में इस बारे में कहीं एक शब्द भी नहीं लिखा कि इस महाप्रदेश के कौन से भाग से उन्होंने अपनी कथाओं का संग्रह किया है। वे केवल इतना ही लिखकर रह जाते हैं कि ये कहानियाँ उन्होंने ग्रामीण पुरुषों से सुनी हैं, और 'सुकुमार वयस्क पाठकों की आवश्यकता का विचार करके थोड़ी सी काट-छाँट और हेर-फेर के साथ' यहाँ दी जाती हैं। रामास्वामी राजू, जो कि वास्तव में एक सुयोग्य लेखक हैं, १०० भारतीय कहानियों का संग्रह लेकर सामने आते हैं। किन्तु इन कहानियों के विषय में वे इससे अधिक और कुछ नहीं लिखते कि 'इनमें से कुछ तो, यद्यपि एक दूसरे रूप में, भारत के प्राचीन साहित्य में दीर्घकाल से विकराल हैं, और कुछ मौखिक स्रोत से ली गई हैं। एम०

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कुलक भी केवल इतना कहने की आवश्यकता समझते हैं कि अपनी ये कहानियाँ उन्होंने एक सुयोग्य नवयुवक ब्राह्मण से प्राप्त कीं, जो कि बहुत दूर एक देहात में रहता था। रवीन्द्रनाथ ठाकुर की भतीजी शोभना देवी की कहानियाँ अतीव सुन्दर हैं। पर वे भी उनके विषय में केवल इतना ही कहती हैं कि ये कहानियाँ अशिक्षित ग्रामीणों से ली गई हैं, और बहुत सी एक अंधे आदमी से मिली हैं। मेकेंज़ी की 'इन्डियन फ़ेरी स्टोरीज़' में केवल यही दोष नहीं है कि कहानियों के मूलस्रोत का उनमें कोई उल्लेख नहीं, बल्कि स्पष्टतः उनके असली पाठ को भी बदल दिया गया है। सन् १९०३ में जी० जेठा भाई लिखित 'इंडियन फोकलोर' नामक कहानियों का एक छोटा संग्रह प्रकाशित हुआ। ये पहले गुजराती में छपीं और गुजरात के ग्रामों से ही वस्तुतः उनका संकलन हुआ। पर यहाँ भी लेखक ने हमको इस विषय में बिलकुल अंधकार में रक्खा है कि ये कहानियाँ कब, किस तरह और किस प्रकार के लोगों से संगृहीत की गईं। रिचार्ड टैम्पल अपनी 'लीजेन्ड्स ऑफ़ दि पंजाब' (पंजाब की लोक-कथाएँ) नामक पुस्तक में जिस निष्कपट भाव से अपनी कार्य-पद्धति का ज्ञान हमें कराते हैं वह सर्वथा प्रशंसनीय है। परन्तु इस भय से कि पाठक कहीं इसे उनका 'अहंभाव' न समझें, अपने इस कार्य के लिए वे उनके निकट क्षमा-याचना की आवश्यकता अनुभव करते हैं। इस एक तथ्य से लोककथा-साहित्य के प्रति लोगों के पुराने रुख़ का सुन्दर परिचय मिलता है। किन्तु अब समय बदल गया है। आज तो जातितत्त्व-वेत्ता अथवा लोकवार्त्ता-शास्त्री से केवल 'अहंभाव' की ही नहीं, बल्कि बिना किसी हिचक या संकोच के सब बातों को खोलकर कहने की माँग पेश की जा रही है।

दूसरा गंभीर दोष जो इन कहानी-संग्रहों में पाया जाता है वह है उनमें मनमानी कतर व्योंत का किया जाना। सर रिचार्ड टैम्पल ने हिस्लप की असली कहानी में से 'अनावश्यक, अनुपयुक्त, सामान्य एवं आपत्तिजनक' अंश को अलग करके और इस प्रकार कहानी के मूल कलेवर को तराशकर उसे लगभग आधा करके इस परिपाटी की नींव डाल दी। यह सचमुच एक उल्लेखनीय बात है कि भारत में लोक-कथाओं का संग्रह-कार्य पादरियों और अंग्रेज़ महिलाओं के मनो-विनोद का एक बढ़िया साधन समझा गया हो। जैसे कि, बंगाल की कहानियों के लिए हम रेवेरेंड लालबिहारी दे के, संथाल कहानियों के लिए रेवेरेंड ओ० बोडिंग के और रेवेरेंड ए० कैम्बेल के, एवं काश्मीर की कहानियों के लिए रेवेरेंड जे० एच०

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नौलीज़ तथा रेवेरेंड सी० स्विनर्टन के ऋणी हैं। महिलाओं में मिस फ्रेयर, मिस स्टोक्स, मिस थॉर्नहिल, श्रीमती स्टील, श्रीमती ड्रकौट तथा और कई एक हैं। इसका अनिवार्यतः परिणाम यह हुआ है कि ये सब कहानियाँ पादरियों अथवा रमणी-जनसुलभ कानों के सुनने योग्य ही बनी हैं । यह तो शायद उतने खेद का विषय नहीं। पर इसका परिणाम यह हुआ है कि दुनियाँ को कार्य-कलापों की असली स्थिति का एकाङ्गी चित्र देखने को मिला है। श्रीमती ड्रकौट अपनी 'शिमला विलेज टेल्स' में लिखती हैं कि—'दो एक मर्तबा मुझसे एक पहाड़ी आदमी को, जिसे स्थानीय लोकवार्त्ताओं का अच्छा ज्ञान था, बुलाकर कहानी सुनने के लिए कहा गया। परन्तु स्पष्ट कारणों से मैंने ऐसा करने से इन्कार कर दिया। क्योंकि मैं देख चुकी थी कि शिमला की ग्रामीण स्त्रियों ने मुझे जो कहानियाँ सुनाईं वे बड़ी गन्दी थीं। उनको प्रकाशित नहीं किया जा सकता। अपने इस संग्रह में मैंने उन्हें स्थान नहीं दिया है।' इसी प्रकार कैम्बेल इस बात को स्वीकार करते हैं कि अनुवाद में उन्होंने यथेष्ट स्वच्छन्दता से काम लिया है। शिष्ट समाज में न सुनाये जाने योग्य मुहावरों और दृष्टान्तों को उन्होंने अलग कर दिया है। सीलोनी कहानियों के संग्रहकर्त्ता पार्कर तो यह विलक्षण दावा करते हैं कि 'इस प्रकार की कहानियों के सबंध में, जिनकी रचना केवल देहातियों के मनोरंजन के लिए हुई हो, और जिन्हें देहाती लोग दूसरे देहातियों को सुनाया करते हों, इस बात की कल्पना बहुत स्वाभाविक है कि उनमें गंदी बातें बहुत अधिक मात्रा में होंगी। पर दरअसल बात ऐसी नहीं है, बल्कि मैं बड़े संतोष के साथ यह कहता हूँ कि इस पूरी जिल्द में केवल तीन चार स्थलों पर ही कहानियों के किसी एक अंश में थोड़े बहुत परिवर्त्तन की आवश्यकता मैंने अनुभव की।' पर मैं यह विश्वास नहीं कर सकता कि सीलोन के देहाती दुनियाँ के अन्य प्रदेशों के देहातियों और कृषकों से इतने पूर्ण रूप से भिन्न हैं। इसे तो कोई पसंद नहीं करेगा कि 'ओल्ड डैकन डेज़' जैसी पुस्तक के निर्मल पन्नों को देहाती गुंडों के फूहड़ मज़ाक़ या शराबियों के अश्लील अट्टहास से दूषित किया जाये। किन्तु अनेक ऐसे संग्रह भी हैं जो आमतौर से सबके पढ़ने के लिए नहीं बने हैं। (जैसे कि संथाली और सीलोनी संग्रह)। इनमें से गंदे, भौंड़े, अश्लील हास्य को, जिसके द्वारा देहातियों की भाषा और भावों की विशेषता इतने सजीव रूप से प्रकट होती है, अलग नहीं किया जाना चाहिए था।

नार्मन ब्राउन ने बतलाया है कि कहीं कहीं लेखकों ने अपने संग्रहों में से

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उन कहानियों को अलग करने में यथेष्ट सावधानी नहीं दिखाई है, जिनको कि उन्होंने सीधा संस्कृत के प्राचीन साहित्यिक ग्रंथों से अनूदित किया है। स्वयं भारतीय लेखक ही इसके लिए अधिक दोषी हैं। उदाहरण के लिए, पं० नटेश शास्त्री ने अपने संग्रह में पैंतालीस कहानियाँ प्रकाशित की हैं। इनमें से एक कहानी, जो कि 'टेल्स ऑफ़ दि सन' के नाम से दी गई है, वस्तुतः मौखिक कहानी नहीं है, बल्कि सोलहवीं शताब्दी की 'अलकेश कथा' नामी एक तामिल कहानी का अनुवाद है। उसे वे अन्य दो स्थानों पर एक साहित्यिक कृति के रूप में प्रकाशित कर चुकते हैं। उनकी अन्य कहानियाँ भी स्पष्टतः साहित्यिक हैं। इस प्रकार की और कितनी कहानियाँ होंगी, मैं कह नहीं सकता। मि० जी० आर० सुब्राह्मिया पंतालु की 'फ़ोकलोर ऑफ़ दि तेलगूज़' के संबंध में भी यही कहना पड़ता है। उदाहरण के लिए, उसकी एक कहानी हितोपदेश के किसी एक तेलगु पाठ के प्रथम परिच्छेद का अनुवाद है। मि० रामास्वामी राजू की 'इंडियन फ़ेबिल्स' की अधिकांश कहानियों की प्रामाणिकता संदिग्ध है। उनमें से कुछ तो साहित्य से ली गई हैं, और यदि उनको मौखिक मान लिया जाये तो कहना चाहिए कि संग्रहकर्त्ता ने उनका 'परिष्कार' कर दिया है।

अंत में, अनेक कहानी-संग्रहों के अनुवाद या तो मूल के इतने अनुरूप हैं कि उनको पढ़ना कठिन है, या फ़िर वे इस प्रकार लिखे और परिमार्जित कर दिये गये हैं कि मूल से उनका कोई सम्बन्ध ही दृष्टिगोचर नहीं होता। शरच्चन्द्र राय के अनुवाद अपनी अविकलता के कारण बहुत थकानेवाले बन गये हैं। यही दशा पार्कर के अनुवादों की है। लेखक के लिखने का उद्देश्य यह होता है कि लोग उसे पढ़ें। किन्तु यदि उसकी रचना में क्षेपकों और कोष्ठकों की भरमार हो तो फिर यह सम्भव नहीं होता। साहित्यिक-लेखन शैली के दूसरे छोर पर श्रीमती एफ़० ए० स्टील की कहानियाँ हैं। उन्होंने अपनी लेखन-चातुरी द्वारा प्रत्येक कहानी में कुछ ऐसी विशेषता उत्पन्न कर दी है कि वह अलग ही एक नवीन मौलिक कृति के रूप में जीवित रह सकती है। उनके The Tiger, the Brahman and the Jackal (शेर, ब्राह्मण और सियार) के अनुवाद से यह परम स्पष्ट रूप से प्रकट होता है। यह एक बढ़िया भारतीय कहानी है और इस अभिप्राय की जितनी भी कहानियाँ मिलती हैं उनमें निस्संदेह सर्वश्रेष्ठ है। किन्तु स्टील के हाथ में पड़कर उसने एक रोचक अंग्रेज़ी कहानी का रूप धारण कर लिया है।

भारतीय लोक-कथाओं के अब तक जितने भी अनुवाद हुए हैं उनमें बोम्पस

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

और मिल्स का अनुवाद मैं सर्वोत्तम मानता हूँ। साफ़-सुथरा, सरल और पठनीय। कानों को खटकनेवाला कहीं एक शब्द भी नहीं। मैंने अपनी 'फ़ोकटेल्स ऑफ़ महाकोशल' नामक पुस्तक की कहानियों के अनुवाद में बोम्पस और मिल्स को ही आदर्श माना है। सभी कहानियों को मैंने इस प्रकार हाथ में लिया है मानों मैं कविता का अनुवाद करने बैठा हूँ। बाहर का एक भी शब्द, एक भी अलंकार, एक भी भाव नहीं आने दिया। साथ ही प्रत्येक कहानी को मैंने जातितत्त्वविषयक प्रकाशित विवरणों के आधार पर ठोक बजाकर देख भी लिया है। मेरी कहानियों तथा उनके बीच कोई असंगति उत्पन्न नहीं होने पाई। प्रत्येक दशा में कहानी सुनानेवाले के गाँव और फ़िरक़े (Tribe, ट्राइब) का नाम भी मैंने दे दिया है। इसका यह आशय नहीं कि वह कहानी उस फ़िरक़े में ही सीमित मान ली गई है, और न यह अर्थ ही कि उस फ़िरक़े का प्रत्येक व्यक्ति उससे सचमुच परिचित है। वास्तव में कहानियाँ तो किसी एक समाज के लोगों की सम्पत्ति न होकर एक प्रदेश विशेष की ही निधि होती हैं। इसीलिए अपने एक ही संग्रह में मैंने अनेक विभिन्न लोगों से सुनी कहानियों का संकलन किया है। यथासंभव मैंने काट छाँट को भी बरकाया है।

भारतीय लोक-कथाओं के सम्बन्ध में अब तक जितना भी साहित्य प्रकाशित हुआ है उसमें पेंज़र के 'कथा सरित्सागर' का एक विशेष स्थान है। कथाशास्त्र का यह एक अनुपम ग्रन्थ है। पेंज़र ने उसके द्वारा भारतीय लोक-कथाओं की जो सेवा की है उसके लिए हम चिरकाल तक उनके ऋणी रहेंगे। फिर इस सम्बन्ध में मॉरिस ब्लुमफ़ील्ड, नार्मन ब्राउन, रूथनार्टन, एम० बी० एमेन्यू, इन सब अमेरिकन विद्वानों के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इन्होंने भारतीय लोक-कथाओं के अध्ययन की एक नितान्त नवीन प्रणाली स्थापित की एवं एक ऐसे विषय को जो अब तक बहुत कुछ अटकल के सहारे चल रहा था, एक शुद्ध एवं नियमबद्ध शास्त्र का रूप प्रदान किया। ब्लुमफ़ील्ड ने तो भारतीय कथाओं के एक वृहत् कोष (इन्साइक्लोपिडिया) की तैयारी का बीड़ा उठाया था। उनकी मृत्यु एवं संसारव्यापी महायुद्ध की गड़बड़ी से यह शुभ कार्य यद्यपि पिछड़ गया है; पर मेरा विश्वास है कि अब शान्ति के स्थापित होने और विद्वानों को इस प्रकार के प्रयत्नों की ओर पुनः ध्यान देने का यथेष्ट अवसर मिलने पर वह अवश्य पूरा होगा।

[उपर्युक्त लेख डा० वैरियर एलविन डी० एस-सी० (ऑक्सन) की पुस्तक 'फ़ोकटेल्स

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ऑफ़ महाकोशल' की भूमिका के आधार पर लेखक की विशेष अनुमति से 'लोकवार्त्ता' के लिए प्रस्तुत किया गया है। वास्तव में उसके लिए हम डा० एलविन के अत्यन्त कृतज्ञ हैं। साथ ही उनके प्रकाशक ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस (बंबई) को भी हार्दिक धन्यवाद देना चाहते हैं, जिनके परम सौजन्य से हम लेख को वर्त्तमान रूप में प्रकाशित करने में समर्थ हुए।

लेख को एक स्वतंत्र निबंध का रूप दिया गया है। उसे हिन्दी में लिखाने और तैयार कराने की ज़िम्मेदारी हमारी है। हमने यथाशक्ति विद्वान् लेखक के विचारों की रक्षा करने की चेष्टा की है फिर भी यदि अज्ञानतावश हमसे कोई त्रुटि हो गई हो, तो आशा है एलविन साहब हमें क्षमा करेंगे।

भारतीय लोक-कथाओं के संबंध में पाश्चात्य विद्वानों ने बड़ा महत्वपूर्ण कार्य किया है। डा० एलविन के इस सारगर्भित लेख को पढ़कर उसका एक सुन्दर परिचय तो हमें मिलता ही है साथ ही लोक-कहानियों के वास्तविक स्वरूप एवं उनके संग्रह आदि की आधुनिक वैज्ञानिक पद्धति के विषय में भी हमारी जानकारी बढ़ती है। आशा है, हमारे उन लेखक बंधुओं के लिए, जो लोक-साहित्य के संग्रह से रुचि रखते हैं अथवा पहले से इस क्षेत्र में कार्य कर रहे हैं, लेख रोचक ही नहीं ज्ञानवर्द्धक और शिक्षाप्रद भी सिद्ध होगा।

—सम्पादक]

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्व० रायबहादुर शरच्चन्द्र राय

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्व० रायबहादुर शरच्चन्द्र राय

श्री गणेश चौबे

भारत के जिन मनीषियों ने अपने प्रबल पाण्डित्य, विलक्षण प्रतिभा और अगाध ज्ञान द्वारा पाश्चात्य जगत् में हमारे देशवासियों का मस्तक ऊँचा उठाया है उनमें स्व० रायबहादुर शरच्चन्द्र राय का एक प्रमुख स्थान है। श्रीशरच्चन्द्र राय ने मानव विज्ञान (Anthropology) के अध्ययन तथा उसके द्वारा दलितों और पीड़ितों की सेवा को अपने जीवन का व्रत बना लिया था। उसका बड़ी लगन और तत्परता के साथ आजीवन निर्वाह करते हुए उन्होंने ३० अप्रेल सन् १९४२ को, एकहत्तर वर्ष की आयु में इस लोक से विदा ली। हमारे देश का साधारण शिक्षित वर्ग भले ही उनके महान् व्यक्तित्व से परिचित न हो। परन्तु सरस्वती-मन्दिर के इस एकनिष्ठ उपासक ने अपने जीवन के चवालीस वर्षों को ज्ञान की विकट साधना में व्यतीत कर वह वरदान पाया है कि जिससे वह विद्वानों की मंडली में चिरकाल के लिए श्रद्धा और सम्मान का पात्र बन गया है, और उनके बीच तब तक अमर रहेगा जब तक ज्ञान और सत्य के अन्वेषण की प्रवृत्ति मानव में मौजूद है।

रायबहादुर शरच्चंद्र राय का जन्म तारीख़ ४ नवम्बर सन् १८७१ ई० को हुआ था। वे सन् १८८८ ई० में कलकत्ता के सिटी कॉलेजिएट स्कूल से प्रवेशिका परीक्षा तथा सन् १८९२ में जनरल एसेम्बली इन्स्टीट्यूट से सम्मानपूर्वक बी० ए० की परीक्षा में उत्तीर्ण हुए। सन् १८९३ ई० में उन्होंने उसी कॉलेज से एम० ए० तथा सन् १८९५ ई० में रिपन कॉलेज से बी० एल० की डिग्री प्राप्त की। उसके दो वर्ष बाद ही उन्होंने चौबीस परगना (अलीपुर, कलकत्ता) में वकालत प्रारम्भ कर दी। किन्तु दूसरे वर्ष वे राँची आ बसे। कुछ ही दिनों में वहाँ उनकी वकालत चमक उठी और इस क्षेत्र में उनको बड़ी ख्याति प्राप्त हुई।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

श्री शरच्चन्द्र राय का कलकत्ता से आकर राँची में बस जाना भारतीय जाति विज्ञान (Ethnology) और लोक विज्ञान के लिये बड़े सौभाग्य की बात सिद्ध हुई। राँची झारखण्ड में अवस्थित तथा वनों से परिवेष्ठित है, जहाँ मुण्डा, उराँव, बिरहोर, भुइया, खड़िया, कोरवा, हो आदि जातियाँ निवास करती हैं। ये जातियाँ अज्ञात काल से प्रकृति की इस रंगस्थली में क्रीड़ा करती आ रही हैं, और आज भी सभ्यता की शैशवावस्था को अतिक्रम नहीं कर पाई हैं। तथाकथित ये असभ्य जातियाँ सभ्यताजनित छलप्रपंचों से अनभिज्ञ हैं तथा पूर्ण सचाई का जीवन व्यतीत करती हैं। कोलेतर जातियों के द्वारा इन कोलवंशीय जातियों का शोषण एवं प्रपीड़न देखकर श्री-शरच्चन्द्र का हृदय द्रवित हो उठा। शासकवर्ग इन जातियों की भाषा, धर्म, रस्म-रिवाज, मनोवृत्ति, जीवनयापन के तरीक़े, उनकी भूसम्पत्ति सम्बन्धी परम्पराओं और नियमों आदि से अनभिज्ञ होने के कारण उनसे उदासीन रहता था। फलतः उन्हें अदालतों से भी उचित न्याय प्राप्त नहीं होता था। श्रीशरच्चन्द्र राय ने उनकी इस दयनीय दशा को दूर करने के उद्देश्य से उनके जातीय-जीवन, भाषा, संस्कृति, इतिहास, आदि का अध्ययन प्रारम्भ किया, और सन् १९१२ ई० में इस विषय पर उनकी प्रथम पुस्तक 'The Mundos and their Country' (अर्थात् 'मुण्डा और उनका देश') नाम से प्रकाशित हुई। तत्पश्चात् उराँव, खड़िया, बिरहोर, भुइया, आदि जातियों पर भी उनके अनेक ग्रन्थ तथा निबन्ध प्रकाशित हुए। एक वकील की हैसियत से वे अदालतों में सदा आदिम जातियों का पक्ष ग्रहण किया करते थे और अन्यत्र भी उनके स्वत्वों तथा सुविधाओं की रक्षा के लिए सतर्क तथा प्रयत्नशील रहते थे।

सन् १९२० ई० में वे लंदन की फ़ोकलोर सुसाइटी (Folklore Society) के मान्य सदस्य निर्वाचित हुए। इस सम्मान को प्राप्त करनेवाले वे प्रथम भारतीय थे। सन् १९२१ में उन्होंने इंडियन साइंस कांग्रेस (भारतीय विज्ञान परिषद्) के मानव विज्ञान विभाग के सभापति-पद को सुशोभित किया तथा सन् १९३२ एवं ३३ में वे 'ऑल इन्डिया ओरिएन्टल कान्फ्रेन्स' के मानव विज्ञान और लोकवार्त्ता-विभाग के सभापति बने। वे 'बिहार एण्ड उड़ीसा रिचर्स सुसाइटी' की कार्य-समिति के सदस्य तथा भारत की 'नेशनल इन्स्टीट्यूट ऑफ़ साइन्स' एवं पटना विश्व-विद्यालय के स्थायी फ़ेलो थे। इसके अतिरिक्त वे मानव-विज्ञान एवं जाति-विज्ञान की अंतर्राष्ट्रीय कांग्रेस के सदस्य (Council d'honour of the International

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

congress of the Anthropological and Ethnological Science) भी थे। क़ानूनवेत्ता एवं सार्वजनिक कार्यकर्त्ता होने के नाते वे साइमन कमिशन और लोथियन कमिशन की प्रान्तीय समिति के तथा बिहार उड़ीसा लेजिस्लेटिव कौंसिल के भी सदस्य चुने गये थे। सरकार ने उनकी साहित्यिक और सार्वजनिक सेवाओं से प्रभावित होकर सन् १९१९ में उन्हें रायबहादुर की उपाधि तथा सन् १९२० में क़ैसरेहिन्द के रजत पदक से सम्मानित किया। बिहार सरकार आदिम जाति सम्बन्धी अन्वेषण-कार्य को प्रोत्साहित करने के लिये उन्हें आर्थिक सहायता भी दिया करती थी। सन् १९४१ ई० में भारतीय विज्ञान परिषद् ने उनकी सत्तरवीं वर्षगाँठ के उपलक्ष में वर्त्तमान समय के प्रमुख मानव विज्ञन-वेत्ताओं द्वारा लिखित लेखों का एक संग्रह भेंट कर उनके प्रति अपना सम्मान प्रदर्शित किया।

श्रीशरच्चन्द्र राय ने अपने चवालीस वर्ष के साहित्यिक जीवन में सात पुस्तकों का प्रणयन किया, अड़तालीस लेख लिखे, और अपनी मृत्यु के पूर्व के इक्कीस वर्षों में मानवविज्ञान सम्बन्धी त्रैमासिक पत्रिका 'मैन इन इंडिया' का प्रकाशन एवं सम्पादन किया। इसके अतिरिक्त उन्होंने छोटा नागपुर के प्राग् ऐतिहासिक युग की असुर जातियों के भग्नावशेषों की खुदाई भी कराई थी। उनका घर एक म्यूज़ियम के समान है, जहाँ आदिम जातियों के जीवन से सम्बन्ध रखनेवाली अनेक मूल्यवान् वस्तुओं का संग्रह है।

स्थानाभाव के कारण यहाँ श्रीशरच्चन्द्र की कृतियों का पूरा विवरण देना कठिन है। अतः उनके ग्रन्थों का परिचय मात्र नीचे दिया जाता है :—

(१) The Mundas and their Country (मुण्डा और उनका देश) यह ग्रन्थ सन् १९१२ में प्रकाशित हुआ। इस पुस्तक के प्रारम्भ के एक सौ पचास पृष्ठों में मुण्डा तथा भारत की अन्य कोलवंशीय जातियों का प्राचीन इतिहास, फिर तीस पृष्ठों में मध्यकालीन युग का और लगभग १७५ पृष्ठों में वर्त्तमान समय का इतिवृत्त है। फिर लगभग १०० पृष्ठों में उनकी लोक-वार्त्ताओं का संकलन है। इसके अतिरिक्त पुस्तक के अंत में ४ परिशिष्ट हैं, जिनमें इस जाति की अनुश्रुतियों में प्राप्त इतिहास एवं भूमि सम्बन्धी नियमों, प्रथाओं, आदि का विस्तृत वर्णन है। इस प्रकार इस ग्रन्थ में भारत की मुण्डा जाति का प्राग् ऐतिहासिक काल से लेकर आज तक का पूरा इतिहास दिया गया है, जो जाति-विज्ञान एवं भारतीय विद्याशास्त्र (Indology) के विद्यार्थियों के लिए बड़े काम की वस्तु है। शरच्चन्द्र राय

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

की मान्यता है कि मुण्डा तथा अन्य कोल जातियाँ प्रारम्भ में विंध्य तथा अरावली पर्वत के वनों में निवास करती थीं और धीरे-धीरे उत्तर भारत की नदियों के किनारे आ बसीं (पृ० २६)। इन कोल जातियों के प्राचीन इतिहास के साधन उनकी अनुश्रुतियाँ एवं परम्पराएँ, संस्कृत का प्राचीन साहित्य, तथा भूगर्भ से प्राप्त वस्तुएँ हैं।

(२) The Oraon of Chota Nagpur (छोटा नागपुर की उराँव जाति, १९१५ ई०) इस पुस्तक में उराँवों के इतिहास, उनके अवस्थान का उनके सामाजिक जीवन पर प्रभाव, शारीरिक विशेषताएँ, रहन-सहन, शृंगार, आभूषण, वेशभूषा, ग्राम-संस्थाएँ, आर्थिक अवस्था, कृषि एवं तत्सम्बन्धी टोना-टोटका, शिकार, कला-कौशल, जीवन-यापन के तरीक़े, सामाजिक तथा जातीय संगठन, कुमार-कुमारिका गृह (Dormitory), नृत्य-गीत, गोत्रपरिचय (Totem) की प्रथा, पंचायत आदि की ४३८ पृष्ठों में विद्वत्तापूर्ण विवेचना की गई है। परिशिष्ट में उराँवों के कृषि सम्बन्धी रस्म-रिवाज तथा उनकी दंतकथाएँ दी गई हैं। उराँवों का जातीय नाम कुड़ूख है और ग्रन्थ-प्रणेता की सम्मति है कि रामायण में वर्णित वानर उराँवों के पूर्वज थे।

(३) Principles and Methods of Physical Anthropology (भौतिक मानव-विज्ञान के मूल सिद्धान्त और तरीक़े, सन् १९२१) यह पुस्तक शरद् बाबू के पटना विश्व-विद्यालय के तत्त्वावधान में दिये गये रीडरशिप लेक्चरों का संग्रह है। पुस्तक मानव विज्ञान के प्रारंभिक अध्ययन के लिये अतीव उपयोगी है। उसके संबंध में सर जेम्स फ्रेज़र का कहना है कि इस विषय पर ऐसी सुन्दर पुस्तक अंग्रेज़ी भाषा में कोई भी नहीं है।

(४) The Birhors (बिरहोर, १९२५) बिरहोर छोटा नागपुर की एक आदिम जाति है जिसकी जन-संख्या सन् १९२१ में १५१० थी। यह जाति वहाँ के जंगलों में फैली है। अतः इसके विषय का पूर्ण अनुसंधान करने में पुस्तक-प्रणेता को १५ वर्ष लग गये। ग्रन्थ के प्रारंभ के ३८ पन्नों में तो इस जाति का इतिहास दिया गया है, और शेष में उनकी सामाजिक अवस्था, जन्म, यौवन, विवाह, तथा मृत्यु संबंधी संस्कार, धार्मिक विश्वास तथा अनुष्ठान, जादू-टौना, दंतकथाएँ, नृत्य-गीत, खेल-कूद, कला-कौशल, अंध-विश्वास आदि का वर्णन है। परिशिष्ट में बिरहोरों की भाषा का शब्दकोष एवं कपालमिति (Anthropometery) के सिद्धान्तानुसार

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्राप्त किए गए उनके ललाट आदि का माप भी दिया गया है। पुस्तक ६०८ पृष्ठ की है।

(५) Oraon Religion and Customs (उराँवों का धर्म और रीति-रिवाज, १९२८) इस ग्रन्थ में, जैसा कि उसके नाम से प्रकट है, उराँवों के धार्मिक विश्वास, देवी-देवता, भूत-प्रेत, जादू-टौना, व्रत-त्योहार, जन्म से मृत्यु पर्यन्त के संस्कार, झाड़-फूँक और मंत्रादि की विस्तृत विवेचना है। इसके साथ ही आर्य-समाजी, कबीरपंथी, एवं अन्य हिन्दू तथा ईसाई धर्म-प्रचारकों तथा उराँव जाति के समाज-सुधारकों—नेमटा और टाना भगतों—के आन्दोलनों के फलस्वरूप वर्त्तमान उराँव जाति की प्रवृत्तियाँ किस दिशा में गतिमान हैं इस पर बड़ी सूक्ष्म दृष्टि से विचार किया गया है।

(६) The Hill Bhuiyas of Orissa (उड़ीसा के पहाड़ी भुइया, १९३५) यह पुस्तक उड़ीसा के देशी राज्यों तथा पड़ोसी प्रान्तों के वनों में निवास करनेवाली भुइया जाति पर है। भुइया जाति में बहुतों ने हिन्दू धर्म को अपनाया है और उनमें कुछ ज़मींदार भी हैं। इस ग्रन्थ में उनकी दोनों श्रेणियों की (पहाड़ी एवं समतल भूमि में निवास करनेवाली श्रेणियों की) सभ्यता का तुलनात्मक अध्ययन उपस्थित किया गया है।

(७) The Kharias (खड़िया जाति, १९३६) यह लेखक की अन्तिम रचना है। खड़िया जाति की सभ्यता विकासोन्मुख है। इस ग्रंथ में सभ्यता के भिन्न-भिन्न स्तरों पर पहुँची हुई पहाड़ी खड़िया, ढेलकी खड़िया और दूध खड़िया के जीवन का तुलनात्मक अध्ययन है। यह पुस्तक मानव-विज्ञान के विद्यार्थियों का पथ-प्रदर्शन करेगी, ऐसा इस विषय के सुप्रसिद्ध विद्वान् डा० मैरेट का कथन है।

श्रीशरच्चन्द्र राय की सभी पुस्तकों की भूमिका अपने विषय के विश्वविख्यात विद्वानों ने लिखी है। पुस्तकें अमूल्य चित्रों से सुशोभित हैं, तथा उनकी भाषा इतनी सरल है कि अंग्रेज़ी का साधारण ज्ञान रखनेवाले पाठक भी उन्हें मज़े में पढ़ और समझ सकते हैं। पुस्तकों में अनेक पारिभाषिक शब्द भी आये हैं, किन्तु उनकी परिभाषा उन पुस्तकों के पढ़ने मात्र से स्पष्ट हो जाती है। प्रत्येक विषय का वर्णन सूक्ष्म तथा विस्तृत है। इन सब गुणों से पुस्तकों की उपयोगिता बहुत बढ़ गई है। श्रीशरच्चन्द्र राय के सभी ग्रन्थ प्रामाणिक माने जाते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उनके अधिकांश लेख उनकी पुस्तकों में सन्निविष्ट कर लिये गये हैं। शेष लेख देश की दलित जातियों, राजस्थान के भील, सिक्कम के लेपचा और मंगर, बिहार और युक्तप्रान्त के कोरवा, असुर, पहिरा, आदि जातियों पर हैं। Caste, Race and Religion of India (भारत की जातियाँ, नस्लें और धर्म) नामक उनका लेख लगभग १७४ पृष्ठों में है, जिसमें भारतीय जातितत्त्व के सुविख्यात विद्वानों के विविध सिद्धान्तों की समीक्षा की गई है। भारतीय विज्ञान-परिषद् के मानव-विज्ञान विभाग के सभापति-पद से दिये गये भाषण में भारतीय मानव-विज्ञान के अध्ययन का आरंभ से लेकर उस समय तक का पूर्ण इतिहास दिया हुआ है। ये सभी लेख पठनीय हैं।

भारत में मानव-विज्ञान के अध्ययन को लोकप्रिय बनाने के लिये उन्होंने अपने खर्च से 'मैन इन इंडिया' (Man in India) का प्रकाशन सन् १९२१ में प्रारंभ किया और जीवन-पर्यन्त उसका संपादन करते रहे। अब यह त्रैमासिक पत्रिका डा० वैरियर एलविन के संपादकत्व में प्रकाशित होती है।

श्री शरच्चन्द्र ने कितने निष्काम भाव से मानव विज्ञान का अध्ययन किया इसका परिचय हमें उनकी निम्नाङ्कित उक्ति से चलता है :—

"I venture to assure (the Indian students of Anthropology) from my own humble experience that such a study will bring with it in the shape, at any rate, of personal satisfaction and delight an adequate reward for the time spent and trouble taken" (Man In India', March 1921, Page 54).

अर्थात् 'मैं अपने तुच्छ अनुभव से मानव-विज्ञान के भारतीय विद्यार्थियों को यह विश्वास दिलाने का साहस करता हूँ कि इस विषय के अध्ययन से, कम से कम, हमें एक ऐसा आत्मसंतोष एवं आनंद प्राप्त होगा जो उस कार्य में व्यतीत किये गये समय एवं कष्ट-वहन का स्वयं यथेष्ट पुरस्कार होगा।

इस लेख का लेखक शरद् बाबू के Oraon Religion and Customs ग्रन्थ को देखकर मानव विज्ञान के अध्ययन में प्रवृत्त हुआ। मेरे जैसे और कितने व्यक्तियों को श्रीशरच्चन्द्र ने परोक्ष या प्रत्यक्ष रूप से इस क्षेत्र में प्रविष्ट होने के लिये प्रेरित किया है यह कौन बता सकता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सम्पादकीय टिप्पणी—

स्व० शरद् बाबू पर लिखे गये उपर्युक्त लेख के लिए हम बंधुवर श्रीगणेश चौबे के बड़े कृतज्ञ हैं। नृशास्त्र हमारे लिए एक नया विषय है। यदि यह कहा जाये कि हिन्दी में अभी उसकी चर्चा भी प्रारंभ नहीं हुई है तो यह अत्युक्ति नहीं होगी। अंग्रेज़ी में इस विषय पर हमारे देश में बहुत कुछ प्रकाशित होता रहता है। किन्तु हिन्दी पत्र-पत्रिकाएँ उस संबंध में उदासीन हैं। मानव विज्ञान एवं समाजशास्त्र पर शास्त्रीय ढंग से शायद ही किसी पत्रिका में कुछ प्रकाशित होता हो। अतः हमारे अधिकांश पाठक यदि स्व० शरच्चन्द्र राय के व्यक्तित्व से परिचित न हों, और यह ज्ञान न रखते हों कि अपनी नृशास्त्र विषयक रचनाओं द्वारा उन्होंने हमारे देश की कैसी महान् सेवा की है, तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं। हमें याद नहीं पड़ता कि शरद् बाबू के संबंध में कभी किसी हिन्दी पत्र में कुछ लिखा गया हो।

स्वर्गीय शरच्चन्द्र राय अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के विद्वान् थे। वे पहले भारतीय थे जिन्होंने लोक-कल्याण की भावना से प्रेरित होकर भारत के एक वन्य प्रदेश की दलित और पीड़ित आदिम जातियों के अध्ययन और शोध को अपने जीवन का लक्ष्य बनाया। उनकी गणना उन थोड़े से भारतीय विद्वानों में होती है जिनकी रचनाओं को पाश्चात्य विद्वान् सम्मान और श्रद्धा की दृष्टि से देखते हैं। बिरहोरों पर लिखित उनकी पुस्तक के विषय में नृशास्त्र और प्राणिशास्त्र के उद्भट् पंडित सर आर्थर कीथ ने उनको लिखा था.............you have done a splendid piece of work—one which will make Europe indebted to you.........' ....'आपने एक उत्कृष्ट रचना हमें दी है—एक ऐसी रचना जिसके लिए यूरोप आपका ऋणी रहेगा।' नृशास्त्र के धुरंधर विद्वान् और 'गोल्डन बाउ' (Golden Bough) ग्रन्थ के रचयिता सर जेम्स फ्रेज़र शरद् बाबू को एक उच्च कोटि का नृशास्त्रवेत्ता मानते थे। उनकी Principles and Methods of Physical Anthropology नामक पुस्तक पर अपने विचार प्रकट करते हुए उन्होंने लेखक को लिखा कि—"I admire the range of your knowledge and intellectual interests, The book seems to me to deserve a wide circulation not only in India but wherever the English language is spoken, for, so far as I am aware there is no book on the same broad philosophical lines in English. Hitherto by your

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

monographs on the Mundas and Oraons and your other writings you have proved yourself a first rate field anthropologist, in your new book you have shown powers of higher quality and wider range. India is to be warmly congratulated on possessing in you an anthropologist of a very high order......" अर्थात् "मैं आपके अगाध ज्ञान और पांडित्य का बहुत प्रशंसक हूँ। पुस्तक का केवल भारत में ही नहीं, अपितु जहाँ अंग्रेज़ी भाषा बोली जाती है वहाँ सर्वत्र अधिक से अधिक प्रचार होना चाहिए, क्योंकि, जहाँ तक मुझे अवगत है, इस प्रकार के विशाल दार्शनिक दृष्टिकोण से लिखी गई कोई पुस्तक अंग्रेज़ी में नहीं है। अपनी मुंडा और उराँव विषयक गवेषणापूर्ण पुस्तकों एवं अन्य रचनाओं द्वारा आपने अपने को एक चोटी का नृशास्त्रवेत्ता सिद्ध कर दिखाया है, पर अपनी इस नवीन रचना में तो आपने उससे भी उच्च और प्रकाण्ड योग्यता का परिचय दिया है। आप जैसे महान् नृशास्त्रवेत्ता को पाकर भारत हम सबके निकट हार्दिक बधाई का पात्र है ...." इस प्रकार डा० आर० आर० मैरेट, डा० ए० सी० हैडन, डा० विलियम क्रुक, सर एडवर्ड गेट, डा० रोलाँ बी० डिक्सन आदि सभी पाश्चात्य पंडितों और मानव विज्ञान विशारदों ने शरद् बाबू की विद्वत्ता का लोहा माना है, और उनकी नृशास्त्र विषयक रचनाओं की भूरि भूरि प्रशंसा की है। हमारे देश में एक ऐसा नृशास्त्रवेत्ता हुआ जिसकी पश्चिम के विद्वान् प्रशंसा करें, इसका हमें उचित गर्व होना चाहिए।

श्रीगणेश चौबे के प्रयत्न से शरद् बाबू के जीवन एवं उनकी प्रमुख कृतियों का कुछ परिचय हम यहाँ पाठकों को दे सके, इसका हमें बड़ा हर्ष है। हम स्वयं परोक्ष रूप से अपने को शरद् बाबू का एक शिष्य मानते हैं, उनकी रचनाओं के निकट हम बड़े ऋणी हैं। हमने उनसे बहुत कुछ सीखा है और सीख भी रहे हैं। जब कभी हम शरद् बाबू के ग्रन्थों को उठाकर देखते हैं तो सदैव मन में यह विचार उत्पन्न होता है कि क्या कभी हिन्दी में भी वह युग आयेगा जब उसमें इस प्रकार के मौलिक और गवेषणापूर्ण ग्रन्थ तैयार हों, और पाश्चात्य विद्वान् उनको पढ़ने के लिए लालायित हों।

शरद् बाबू के प्रति अपनी श्रद्धाञ्जलि भेंट करने के उद्देश्य से उनकी पुण्य-स्मृति में हमने 'लोकवार्त्ता' का एक विशेषाङ्क प्रकाशित करने का निश्चय किया है। उसमें शरद् बाबू की जीवनी एवं उनकी रचनाओं का विस्तृत परिचय तो रहेगा ही, साथ ही भारतीय नृशास्त्र पर योग्य और अधिकारी विद्वानों द्वारा लिखे विविध उपयोगी और सारगर्भित लेख भी रहेंगे। हमारी यह हार्दिक इच्छा है कि 'लोकवार्त्ता' का यह अंक सर्वाङ्ग सुन्दर एवं

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इस विषय के जिज्ञासुओं के लिए सब प्रकार से रोचक और ज्ञानवर्द्धक सिद्ध हो। अतएव आशा है कि भारतीय नृशास्त्र के प्रतिष्ठित विद्वानों और लेखकों, तथा शरद् बाबू के सभी मित्रों, प्रशंसकों और भक्तों से अपने उद्देश्य को पूरा करने में हमें उचित सहायता मिलेगी। हमारी उनसे प्रार्थना है कि शरद् बाबू के व्यक्तित्व एवं नृशास्त्र विषयक उनकी सेवाओं तथा भारतीय नृशास्त्र संबंधी विषयों पर अपने लेख भेजने की कृपा करें। लेख अंग्रेज़ी में भेजे जा सकते हैं। अंक की पूरी सामग्री तैयार होते ही हम उसे प्रकाशित कर रहे हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मथुरावली

(एक बुन्देलखंडी लोकगीत)

श्री मधुसूदन द्विवेदी, 'साहित्यरत्न'

कँकरीले बुन्देलखंड के लोकगीतों में वीरगाथाएँ भरी पड़ी हैं। मथुरावली इन्हीं में से एक गीत की वीराङ्गना है। यह गीत श्रावण मास में, मधुर राग में, झूले पर गाया जाता है।

मथुरावली का काका अपने भाई से, अर्थात् मथुरावली के पिता से कुछ अनबन हो जाने के कारण विद्रोही हो जाता है, और एक तुर्क को उस पर आक्रमण करने को बुला लाता है। युद्ध में किसी प्रकार तुर्क उसके भाई की रूपवती पुत्री मथुरावली को बन्दी बना लेता है और उसे अपने शिविर में ले जाकर रखता है। यहीं से गीत प्रारम्भ होता है :—

सगौ (री) कका बैरी भओ,
ल्याओ तुरकिया चढ़ाय,
बन्दी परी हैं—मथुरावली।

(मथुरावली का) सगा काका वैरी हो गया है, (और) एक तुर्क को चढ़ाकर लाया है। (इस प्रकार) मथुरावली बन्दी हो गई है।

तब आकाश में उड़ती हुई एक चील द्वारा मथुरावली अपने संबंधियों को समाचार भेजती है—

सरग उड़न्ती एक चील री,
आधे सरग मड़राय,
जाय जो कहिओ मेरे ससुर से,
सास से कहिओ समझाय,
बंदी परी हैं—मथुरावली।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जाय जो कहिश्रौ राजा जेठ से,
जिठानी से कहिश्रौ समझाय,
बंदी परी हैं— मथुरावली।
जाय जो कहिश्रौ राजा देवरा से,
देवरानी से कहिश्रौ समझाय,
बंदी परी हैं—मथुरावली।
जाय जो कहिश्रौ ननदेऊ से,
ननदी से कहिश्रौ समझाय,
बन्दी परी हैं—मथुरावली।
जाय जो कहिश्रौ राजा साहब से,
प्यारी के बन्द छुड़ाश्रो,
बन्दी परी हैं—मथुरावली।

आकाश (स्वर्ग) में एक चील उड़ रही है। आधे स्वर्ग तक मँड़रा रही है। (हे, मेरी चील) मेरे ससुर से जाकर कहना। मेरी सास से समझाकर कहना। मथुरावली बन्दी पड़ी हैं। मेरे जेठ से जाकर कहना। जिठानी से समझाकर कहना। मथुरावली बन्दी पड़ी हैं। देवर राजा से जाकर कहना। देवरानी से समझाकर कहना। मथुरावली बंदी पड़ी हैं। मेरे ननदेऊ से जाकर कहना। ननद से समझाकर कहना। मथुरावली बंदी पड़ी हैं। मेरे राजा साहब (पति) से जाकर कहना। प्यारी के बंधन छुड़ाश्रो। मथुरावली बंदी पड़ी हैं।

संवाद पहुँच जाता है। मथुरावली के सगे-संबंधी तुर्क के पास (गीत में आगे मुगल हो गया है) उसे छुड़ाने के लिए भेंट पर भेंट ले जाते हैं। किन्तु तुर्क (अथवा मुगल) उन्हें स्वीकार नहीं करता। वह तो मथुरावली के अनुपम सौंदर्य पर रीझा है। सारे प्रयत्न व्यर्थ होते हैं। गीत इस प्रकार आगे चलता है:—

ससुर मिलाश्रौ (हो) लै चले,
लै चले हतिया हजार,
लै रे मुगल के जे हतिया,
बहू तौ छोड़ौ—मथुरावली।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तेरे हथियन कौ मैं का करौं,
मेरे हैं गदहा हजार,
एक न छोड़ौं—मथुरावली।
जाके हैं लंबे लंबे केस,
भौंहें कटीली, नैना रस भरे,
लै जाऊँ काबुल देस,
बीबी बनाऊँ—मथुरावली।
जेठ मिलाओ (हो) लै चले,
लै चले उँटला हजार,
लै रे मुगल के जे उँटला,
बहू तौ छोड़ौ—मथुरावली।
तेरे उँटलन को मैं का करूँ,
मेरे हैं पड़ला हजार,
एक न छोड़ौं—मथुरावली।
जाके हैं लंबे लंबे केस,
भौंहें कटीली, नैना रस भरे,
लै जाऊँ काबुल देस,
बीबी बनाऊँ—मथुरावली।
देवर मिलाओ (हो) लै चले,
लै चले घुड़ला हजार,
लै रे मुगल के जे घोड़ला,
भौजी तौ छोड़ौ—मथुरावली।
तेरे घुड़लन कौ मैं का करूँ,
मेरे हैं खच्चर हजार,
एक न छोड़ौं—मथुरावली।
जाके हैं लंबे लंबे केस,
भौंहें कटीली, नैना रस भरे,
लै जाऊँ काबुल देस,
बीबी बनाऊँ—मथुरावली।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

साहेब मिलाश्रौ (हो) लै चले,
लै चले रंडी हजार,
लै रे मुगल के जे रंडियाँ,
प्यारी तौ छोड़ौ—मथुरावली।
जामें बसत मेरे पिरान,
भौंहें कटीली नैना लागने।
तेरी रंडिन कौ मैं का करूँ,
मेरे हैं बीबी हजार,
एक न छोड़ौं—मथुरावली।
जाके हैं लंबे लंबे केस,
भौंहें कटीली, नैना रस भरे,
लै जाऊँ काबुल देस,
बीबी बनाऊँ—मथुरावली।

ससुर भेंट लेकर जाते हैं। हज़ार हाथी ले जाते हैं। श्रो रे, मुग़ल! ये हाथी ले श्रौर मेरी बहू मथुरावली को छोड़ दे। (मुग़ल कहता है) मैं तेरे हाथियों का क्या करूँगा? मेरे पास तो हज़ार गधे हैं। मथुरावली को मैं नहीं छोड़ूँगा, जिसके लंबे केश हैं। भौंहें कटीली हैं। नयन रसभरे हैं। उसे मैं क़ाबुल देश ले जाऊँगा। उसे अपनी प्रेयसी बनाऊँगा।

जेठ भेंट लेकर जाते हैं। हज़ार ऊँट ले जाते हैं। श्रो रे, मुग़ल! ये ऊँट ले ले श्रौर मेरी बहू मथुरावली को छोड़ दे। (मुग़ल कहता है) मैं तेरे ऊँटों का क्या करूँगा? मेरे पास तो हज़ार भैंसें हैं। मथुरावली को मैं नहीं छोड़ूँगा, जिसके लम्बे केश हैं। भौंहें कटीली हैं। नयन रसभरे हैं। उसे मैं क़ाबुल देश ले जाऊँगा। उसें अपनी प्रेयसी बनाऊँगा।

देवर भेंट लेकर जाते हैं। हज़ार घोड़े ले जाते हैं। श्रो रे, मुग़ल! ये घोड़े ले ले, श्रौर मेरी भावज मथुरावली को छोड़ दे। (मुग़ल कहता है) मैं तेरे घोड़ों का क्या करूँगा? मेरे पास तो हज़ार खच्चर हैं। मथुरावली को मैं नहीं छोड़ूँगा, जिसके लंबे केश हैं। भौंहें कटीली हैं। नयन रसभरे हैं। उसे मैं क़ाबुल देश ले जाऊँगा। उसे अपनी प्रेयसी बनाऊँगा।

(तब) उसके साहेब (पति) भेंट लेकर जाते हैं। हज़ार नर्त्तकियाँ ले

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जाते हैं। ओ रे मुग़ल ! ये नर्तकियाँ ले ले और मेरी प्यारी मथुरावली को छोड़ दे। उसमें मेरे प्राण बसते हैं। उसकी भौंहें कटीली हैं। नयन लागने (लगनेवाले) हैं। (मुग़ल कहता है) तेरी नर्त्तकियों का मैं क्या करूँगा ? मेरे पास तो हज़ार बीबियाँ हैं। मथुरावली को मैं नहीं छोड़ूँगा, जिसके लंबे केश हैं, भौंहें कटीली हैं, नयन रसभरे हैं। उसे मैं काबुल देश ले जाऊँगा। उसे अपनी प्रेयसी बनाऊँगा।

इस प्रकार सारे संबंधी मुग़ल को प्रसन्न करके मथुरावली को बंधन-मुक्त करने में असफल रहे। तब उसका भाई प्रयत्न करता है। वह मुग़ल के शिविर पर चढ़ाई करके सेना लेकर जाता है। तब संभवतः यह सोचकर कि युद्ध के फलस्वरूप मेरे लिए व्यर्थ रक्तपात होगा, मथुरावली अपने भाई से घर लौट जाने को कहती है। वह उसे विश्वास दिलाती है कि मैं तेरी पगड़ी की लाज रक्खूँगी। भाई लौट जाता है। यहाँ गीत बहुत सुन्दर हो गया है:—

> **बिरन मिलाऔ (हो) लै चले,**
> **लै चले तेगा हजार,**
> **बन्दी परी हैं—मथुरावली।**
> **जाऔ बिरन घर आपने,**
> **राखौंगी पगड़ी की लाज,**
> **बन्दी परी हैं—मथुरावली।**

(मथुरावली के) भाई भेंट लेकर जाते हैं। हज़ार तेग़ा (लड़ने के लिए) ले जाते हैं। मथुरावली बन्दी पड़ी हैं।

(मथुरावली कहती है) हे मेरे भाई, अपने घर लौट जाओ। मैं तुम्हारी पगड़ी की लाज रक्खूँगी।

अब यहाँ गीत का चरमोत्कर्ष आता है। यह अत्यन्त करुण एवं हृदय-विंदारक दृश्य है। मुग़ल मथुरावली को अपनी प्रेयसी बनने और इस्लाम धर्म स्वीकार करने को बार-बार समझाता है। मथुरावली सब शान्ति-पूर्वक सुनती है। मुग़ल से पानी माँगती है, और कहती है, मैं भिश्ती के हाथ का पानी नहीं पिऊँगी। तब मुग़ल उसके लिए स्वयं पानी का प्रबंध करने जाता है। इधर मथुरावली शिविर में आग लगा लेती है और ढोलिया से (ढोल बजानेवाले से) ऊँचे स्थान पर बैठकर ढ़ोल से घोषणा करने को कहती है कि 'मथुरावली खड़ी खड़ी जल रही है।' इस

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कार्य के लिए ढोलिया को वह अपनी नाक का आभूषण पुरस्कार में देगी। इतने में मुग़ल आ जाता है। एक हिन्दू रमणी खड़े खड़े जल रही है। यह देखकर वह स्तंभित होकर रह जाता है। उसका पति रोता हुआ आता है। भाई हँसता हुआ आता है। उसे संतोष हो जाता है कि उसकी बहिन ने पगड़ी की लाज रख ली। गीत का यह हृदयस्पर्शी भाग इस प्रकार है:—

लहँगा (री) लुँगरा प्यारी छोड़ दो,
पहरौ तिलक इजार,
बीबी बनौ—मथुरावली।
हरी का नाम प्यारी छोड़ दो,
अल्ला (री) तोबा कहा करो,
बीबी बनौ—मथुरावली।
जा रे मुगल के पानी भर लिआ,
प्यासी मरैं—मथुरावली।
भिस्ती के हाथ कौ पानी ना पियों,
प्यासी मरैं—मथुरावली।
जौनों मुगल पानी गओ,
बँगले में दै लई आग,
ठाँड़ी जरैं—मथुरावली।
नाक की बेसर ढोलिया तोय दऊँ,
ऊँचे चढ़ ढोल बजाऔ,
ठाँड़ी जरैं—मथुरावली।
अंग जरैं जैसे लाकड़ी,
केस जरैं जैसे घास,
ठाँड़ी जरैं—मथुरावली।
अल्ला (रे) तोबा मुगल कहै,
हिन्दू की जोय महा बुरी,
ठाँड़ी भसम हो जाय,
ठाँड़ी जरैं—मथुरावली।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रोय चले बाँके बालमा,
बिहँस चले राजा बीर,
ठाँड़ी जरैं—मथुरावली।
राखी बहना पगड़ी की लाज,
ठाँड़ी जरैं—मथुरावली।

(मुग़ल कहता है) प्यारी, लहँगा-लुँगरा छोड़ दो और तिलक,* इजार † पहना करो। मथुरावली, तुम मेरी बीबी बनो। प्यारी, हरि का नाम छोड़ दो, और अल्ला, तोबा कहा करो। मथुरावली, तुम मेरी बीबी बनो।

(मथुरावली कहती है) रे मुग़ल, जा मेरे लिए पानी भर ला। मथुरावली प्यासी मर रही है। भिश्ती के हाथ का पानी मैं नहीं पिऊँगी। मथुरावली प्यासी मर रही है।

जब तक मुग़ल पानी लेने गया, (मथुरावली ने) बँगले में आग लगा ली। मथुरावली खड़ी खड़ी जल रही है। (वह ढोलिया से कहती है) हे ढोलिया, तुझे अपनी नाक की बेसर दूँगी, तू ऊँचे चढ़कर ढोल बजा—मथुरावली खड़ी खड़ी जल रही है। अंग लकड़ी की तरह जल रहे हैं। केश घास की तरह जल रहे हैं। मथुरावली खड़ी खड़ी जल रही है। (यह दृश्य देखकर) मुग़ल अल्ला तोबा कहता है। हिन्दू रमणी बहुत बुरी होती है। वह खड़ी खड़ी भस्म हो जाती है। मथुरावली खड़ी खड़ी जल रही है। उसके पति रोते हुए चले। भाई हँसते हुए चले। मथुरावली खड़ी खड़ी जल रही है। बहिन ने पगड़ी की लाज रख ली। मथुरावली खड़ी खड़ी जल रही है।

इस प्रकार यह गीत समाप्त होता है। पर बुन्देलखंड में ढोलिया का ढोल, श्रावण मास में, गीत की करुण ध्वनि के साथ, अब भी यह घोषणा करता हुआ सुनाई देता है—

'बहिन ने पगड़ी की लाज रख ली। मथुरावली खड़ी-खड़ी जल रही है।'

---

* एक प्रकार का चोगा जो निकाह के समय मुसलमानों के यहाँ लड़की को पहिनाते हैं।

† पाजामा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बुन्देलखंड के लोक-विश्वास

(जन्म-संबंधी)

[नये वर्ष के इस अंक में हम बुन्देलखंड के लोक-विश्वासों पर एक लेख-माला प्रकाशित कर रहे हैं। यहाँ उसके प्रथम तीन अंश पाठकों की भेंट हैं। एक के लेखक तो हैं चिरगाँव (झाँसी) निवासी श्रीहरगोविन्दजी गुप्त, दूसरे के रैपुरा (बाँदा) निवासी श्रीचंद्रभानुजी 'विशारद' और तीसरे के तालबेहट (झाँसी) निवासी श्रीरामस्वरूपजी योगी। तीनों ही लोकवार्त्ताओं के अनुभवी संग्रहकर्त्ता और परिषद् के सुयोग्य सहायक हैं। हमारे विशेष आग्रह से अपने-अपने स्थानों के लोक-विश्वासों का संग्रह करके वे हमारे पास भेज रहे हैं।

स्थानीय रीति-रिवाजों, विश्वासों, टौना-टोटकाओं और पूजाओं में थोड़ी-थोड़ी दूर पर अंतर पाया जाता है। जो टोटका झाँसी ज़िले में प्रचलित है, संभव है वह बाँदा या हमीरपुर अथवा किसी अन्य स्थान में किसी दूसरे रूप में प्रचलित हो। साथ ही विभिन्न स्थानों में एक ही उद्देश्य की पूर्ति के लिए नये-नये टोटकों और विश्वासों का प्रचलित होना भी बहुत स्वाभाविक है। अतएव यह समझ लेना कि जो लोक विश्वास यहाँ दिये जा रहे हैं वे बुन्देलखंड में सर्वत्र ही उसी रूप में प्रचलित हैं, अथवा उनकी गणना इतने में ही समाप्त हो गई है, ठीक नहीं होगा। वास्तव में इस प्रकार का संग्रह-कार्य प्रत्येक जनपद के छोटे-छोटे स्थानों में अलग-अलग होना चाहिए। तभी वह सर्वाङ्ग सम्पूर्ण कहा जा सकता है; और तभी उसका कुछ वास्तविक मूल्य भी हो सकता है।

आज से लगभग चालीस वर्ष पूर्व इंडियन सिविल सर्विस के ए० एम० टी० जैकसन नामक एक सज्जन ने गुजरात और कोंकन प्रदेश के इसी प्रकार के विश्वासों और रीति-रिवाजों का संग्रह किया था। वह दो भागों में प्रकाशित भी हो चुका है। जैकसन साहब की कार्य-पद्धति हमारे लिए अनुकरणीय है। उन्होंने गुजरात और कोंकन प्रदेश के एक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

एक ग्राम में जाकर वहाँ के वृद्ध किसानों, पटवारियों, शिक्षकों आदि से नाना प्रकार के प्रश्न करके आवश्यक सामग्री का संचय किया और जो बात उनको जिस व्यक्ति से और जिस स्थान पर मालूम हुई उस व्यक्ति और स्थान का नाम उन्होंने बहुत स्पष्ट रूप से लिख दिया। इस प्रकार उनकी पुस्तक के एक-एक पन्ने में कहीं-कहीं बीस-बीस व्यक्तियों के नाम लिखे हैं। साधारण पाठकों को यह एक बड़ा व्यर्थ का काम जान पड़ेगा। परन्तु किसी भी विषय के वैज्ञानिक अध्ययन के लिए इस प्रकार क समीचीनता अत्यन्त आवश्यक है। उससे संग्रहीत सामग्री की प्रामाणिकता ही स्वयंसिद्ध नहीं हो जाती, अपितु इस विषय का अध्ययन करने में भी बड़ी सहायता मिलती है कि एक ही रीति-रिवाज विभिन्न स्थानों में जाकर क्यों और किस प्रकार बदल जाता है।

पाठकों से हमारी प्रार्थना है कि वे अपने-अपने स्थानों के विश्वासों और रीति-रिवाजों का संग्रह करके हमारे पास भेजने का कष्ट करें। उनको स्वयं जो बातें मालूम हों उनको ही लिखकर शान्त न हो जायँ, बल्कि अपने घर और बाहर के बूढ़े, पुराने आदमियों से पूछताछ भी करें। जिससे जो तथ्य प्राप्त हो उसका नाम-धाम और अवस्था लिखना कभी न भूलें।—सम्पादक]

(१)

श्रीहरगोविन्द गुप्त

'लोकवार्त्ता'-संपादक की आज्ञा हुई है कि मैं बुन्देलखंड के लोक-विश्वासों का संग्रह करूँ। उनका यह भी आदेश है कि यह कार्य जन्म-संबंधी विश्वासों से प्रारंभ किया जाये। अतः गर्भावस्था से लेकर संतान की एक वर्ष तक की अवस्था के कुछ लोक-विश्वास यहाँ उपस्थित करता हूँ।

गर्भवती स्त्रियाँ गर्भस्थ शिशु की कल्याण-कामना के लिए नाना प्रकार के उपाय किया करती हैं, सबसे पहले तो अपनी गर्भावस्था का पता लगते ही वे प्रति मास एक नारियल अपने कुल देवता के नाम पर 'उसार' (उत्सर्ग) कर रखती हैं। हर महीने उपवास रखती हैं। देवी-देवता पूजती हैं। साथ ही घर के बड़े बूढ़ों की तरफ़ से बहुत से विधि-निषेध भी उनके साथ लग जाते हैं उनमें से कुछ स्वास्थ्य की दृष्टि से भले ही ठीक हों। किन्तु अधिकांश अंधविश्वास-मूलक ही होते हैं।

वे नदी या ग्राम का मेंड़ा (सीमा) लाँघकर कहीं नहीं जा सकतीं। कुएँ-पन-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

घट पर और नदी-तालाबों पर दोपहरी या रात में जाना उनके लिए वर्जित रहता है। रास्ते में वे बच बच कर चलती हैं, कि कहीं कोई टोटका उनको न लग जाये। जिन स्त्रियों को अनियमित मासिक-धर्म होता है वे प्रायः अपने रज से सने कपड़ों को कुओं या नदी के घाटों पर डाल देती हैं। उनका विश्वास होता है कि इन कपड़ों को यदि कोई दूसरी स्त्री लाँघ जाये तो उसके रज संबंधी सब रोग उसको लग जायेंगे और वह स्वयं रोगमुक्त हो जायेगी। गर्भवती स्त्री इस प्रकार सब टोटकों का ध्यान रखकर चलती है। वह इस बात से भी सावधान रहती है कि कहीं कोई रजःस्वला स्त्री अपनी धोती की 'लाउन' (धोती के नीचे का घेरा) उसके ऊपर से न निकाल दे और उसका अनिष्ट हो जाये।

रात में दूध पीना एकदम बंद रहता है। और दिन में दूध पीकर ऊपर से राख खाना अनिवार्य होता है, ताकि दूध पीने से शुद्ध हुआ अन्तरात्मा पुनः मलिन हो जाये, और कोई भूत-बाधा न सता पाये। यहाँ राख खाने से लगभग वही उद्देश्य पूरा होता है जो बच्चों को काजल लगाने से। विश्वास किया जाता है कि शुद्धात्मा या सुन्दर बच्चों को ही भूत-प्रेत अधिक सताते हैं।

आवश्यक कार्य आ पड़ने पर भी गर्भिणी नदी-नाले लाँघकर दूसरे गाँव में नहीं जायेगी, यदि जाना भी पड़े तो धोती या लुँगरे (ओढ़नी) के छोर में हींग और कोयले की गाँठ बाँध ले जाती है। रास्ते में देवी-देवता का कोई चबूतरा या कोई संदिग्ध स्थान मिला तो उसको हाथ जोड़ती हुई जाती है। संभव हुआ तो नारियल भेंट करती है। किसी भी प्रकार का पकान्न उसके साथ बाहर नहीं जा सकता। रास्ते में खाने, पीने और पेशाब तक करने की मनाही रहती है। क्योंकि इन सब कामों में इस बात का डर रहता है कि आस-पास कोई भूत-बाधा, या किसी उग्र देवी-देवता का निवास हुआ तो वे कहीं गर्भ पर आक्रमण न कर दें।

घर में यदि बाहर का कोई मेहमान या नाते-रिश्तेदार आये तो जब तक वह हाथ पैर न धो ले या किसी दूसरे से बात न कर ले तब तक गर्भिणी उससे न तो बात करेगी, और न उसके सामान को छुयेगी। वह स्वयं भी गर्भिणी से बात नहीं करेगा। क्योंकि भय रहता है कि पथिक के साथ मार्ग में यदि कोई प्रेत-बाधा साथ लग गई होगी तो वह गर्भिणी को हानि पहुँचायेगी। गर्भिणी स्त्री अपने हाथ से घर का कोई छेद या बिल बंद नहीं करती। यह विश्वास किया जाता है कि जब तक वह बिल बंद रहेगा तब तक प्रसव कष्ट-साध्य होगा। उसे कोई साँप-बिच्छू काट ले तो

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

झाड़नेवाले उसे झाड़ने फूँकने नहीं आयेंगे, क्योंकि इससे मंत्र-शक्ति के कुंठित हो जाने का भय रहता है। इसी तरह विश्वास है कि सर्प यदि गर्भिणी को देख ले तो वह अंधा हो जाता है। गर्भिणी स्त्रियाँ ग्रहण को नहीं देखतीं। गर्भ पूरा होने के पहले कभी उनके पेट में दर्द हो जाये तो झाड़-फूँक की ही शरण ली जाती है, दवा नहीं दी जाती।

गर्भवती स्त्री की इच्छाओं को सब प्रकार से पूरा करने की चेष्टा की जाती है। वह जो कुछ खाने को माँगती है वह भी हित-अनहित का विशेष विचार किये बिना, सुविधानुसार उसे दिया जाता है। कहा जाता है कि यदि उसकी खाने-पीने की इच्छाएँ पूरी न की जायें तो सन्तान के मुँह से लार टपकती है।

प्रसव के समय बाँझ स्त्रियों को गर्भिणी के पास नहीं जाने देते। इसका एक कारण तो यह हो सकता है कि प्रसूता के कष्ट को देखकर कहीं वह भयभीत न हो जाये। पर मुख्यतः तो इस बात की आशंका की जाती है कि कोई निःसंतान स्त्री प्रसूता के उस रक्त में जो कि प्रसव के समय निकलता है अपना कपड़ा या अँगूठा भिगोकर न ले जाये, या बच्चे का नरा (नाल) न चुरा ले जाये, जिसे धोकर पी लेने से उसे गर्भ रह जाये, और उसका परिणाम फिर यह हो कि स्वयं उस प्रसूता के संतान न हो। इसी प्रकार यह डर भी रहता है कि कोई ऐसी स्त्री जिसके कन्या ही कन्याएँ पैदा होती हों नरा चुराकर न खा ले। नरा के विषय में यह विश्वास किया जाता है कि उसे धोकर पीने, या खा लेने से निस्संतान स्त्रियों के संतान होने लगती है। इसलिए बाँझ स्त्रियाँ बहुधा दाइयों को रिश्वत देकर नरा चुरवा लिया करती हैं। घर की बड़ी बूढ़ी स्त्रियाँ प्रसव के समय इन सब बातों का ध्यान रखती हैं।

प्रसव के बाद चौथे या पाँचवें दिन, जब भी पंडित मुहूर्त्त बताते हैं, संध्या-समय गाजे-बाजे के साथ प्रसूता को बाहर निकालते हैं। उस समय यदि कहीं सियार की बोली सुनाई दी तो उसे अशुभ मानते हैं। प्रसूता जब तक, १५-२० दिन बाद, धोबिन के पैरों को छूकर उसका आशीर्वाद ग्रहण न कर ले तब तक न तो धोबिन का नाम, न 'धोबिन' शब्द, और न धोबिन की बोली ही उसे सुनाई जाती है। सुनने से उसके दूध के सूख जाने का भय रहता है। जिन स्त्रियों के स्तनों में दूध कम होता है वे ऐसी स्त्रियों से जिनके आगे गर्भ रहने की संभावना नहीं रहती, दूध लेने का टोटका करती हैं। वह दूध देनेवाली स्त्री ऊपर से अपना स्तन निचोड़कर दूध की धार बहाती है जिसे नीचे से दूध लेनेवाली स्त्री ग्रहण करती है। यदि कहीं किन्हीं दो

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्त्रियों के एक ही पखवारे में प्रसव होता है, अथवा दो स्त्रियों के पुत्र ही पुत्र या कन्या ही कन्या उत्पन्न हुईं तो वे परस्पर एक दूसरे से उस समय तक नहीं बोलतीं जब तक छोटी बड़ी के पैर और बड़ी छोटी के पैरों के पास की धरती को छूकर अपना अपना दूध अपने अपने पास रहने का आशीर्वाद प्राप्त न कर लें। इसी प्रकार प्रसूता स्त्री अपने स्नेहियों, पास-पड़ौसवालों और कुटुम्बियों के घर प्रसव के बाद तभी जायेगी जब वे उसे विधि-पूर्वक बुलाकर भोजन करायेंगे और उसकी ओली में चावल आदि भरेंगे। इस क्रिया को 'ओली माँडना' कहते हैं। वर्षा ऋतु टौना टोटकों के बहुत अनुकूल मानी जाती है। इसलिए इस ऋतु में सद्यः प्रसूता स्त्रियाँ एक दूसरे से प्रायः 'अनबोलना' रखती हैं। उनको इस बात का भय रहता है कि दूसरे के बच्चे का कोई रोग उनके बच्चे को न लग जाये। रोगी सन्तान की माताएँ इन दिनों प्रायः इस चिन्ता में रहती हैं कि किसी प्रकार वह अपने बच्चे का रोग दूसरे के बच्चे के गले मढ़ दें। इस उद्देश्य के लिए वे अपनी संतान के कपड़ों का मैल, मल-मूत्र अथवा उनका धोवन, जूठा पानी, ऐसे तिराहों, चौराहों पर, विशेषकर कुएँ-पनघट पर की रास्ताओं पर जहाँ से गाँव की तमाम स्त्रियों के निकलने की अधिक संभावना रहती है, डाल देती हैं। बच्चे की झाड़ा फूँकी का उतारा पानी, राई-नोन, आदि भी वे ऐसे स्थानों पर डाल देती हैं। रोगी बच्चों की माताएँ दूसरे के स्वस्थ बच्चों को दुलारने-पुचकारने, अथवा उनके झूले-पालने की परिक्रमा करने का प्रयत्न भी करती हैं। उनका विश्वास रहता है कि इन सब उपायों से उनके बच्चे का रोग दूसरे के बच्चे को लग जायेगा, और उनका बच्चा नीरोग हो जायेगा। सूखी और डब्बा के रोगों से ग्रस्त बच्चों को प्रायः श्मशान अथवा किसी देवता के स्थान पर रातोंरात ले जाकर नहलाते हैं, कुओं की गिर्रा फँसाई जानेवाली चिरैया में से निकाला जाता है, और कभी कभी उसको झाड़ फूँक करनेवालों से दगवाया भी जाता है। बच्चों को नज़र लगने से बचाने के लिए काजल लगाते हैं, गंडे, तावीज़ पहिनाते हैं, उनको मैला कुचैला बनाकर रखते हैं। यह विश्वास किया जाता है कि सुन्दर और साफ़ सुथरे बच्चों को जल्दी नज़र लग जाती है और उनको भूत-बाधा भी जल्दी सताती है। इसलिए स्त्रियाँ अपने बच्चों को सबके सामने दुलारतीं-पुचकारतीं नहीं। उन्हें बुरे नाम लेकर बुलाती हैं। बच्चे को अगर दस्त लगने लगें, अथवा वह यकायक बीमार पड़ जाये तो यह समझा जाता है कि उसको नज़र लग गई है। तब उस पर से राई-नोन उतारकर फेंकते हैं। मिर्चों की धूनी देते हैं। आग में पत्थर को

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लाल करके उसे उनके ऊपर से उतार कर पानी में बुझाते हैं। खाली झूले के झुलाने से बच्चे के पेट में दर्द होने और रात्रि में उसका नाम लेने पर यदि उल्लू ने सुन लिया तो उसके मूर्ख हो जाने का भय रहता है।

इस प्रकार और भी बहुत से विश्वास या अंध-विश्वास साधारण जनता में प्रचलित हैं। अवसर मिलने पर फिर कभी उन्हें पाठकों की भेंट करूँगा। कहने की आवश्यकता नहीं कि यहाँ शास्त्रोक्त विधि-निषेधों, और पूजाओं का कोई उल्लेख मैंने नहीं किया है।

---

(२)

श्रीचन्द्रभानु 'विशारद'

गर्भिणी स्त्री सूरन या जिमीकंद नहीं खाती। विश्वास किया जाता है कि सूरन खाने से संतान के पैर में छाले पड़ते हैं।

गर्भिणी मरघट की यात्रा नहीं करती। उससे स्तनों का दूध सूख जाने का भय रहता है। जिस स्त्री की दृष्टि बुरी समझी जाती हो गर्भिणी उसके हाथ का दिया कोई पदार्थ नहीं खाती।

गर्भवती होने के पाँच माह बाद स्त्री के मायके से चावल और दही आता है। यही दही-भात देवताओं को चढ़ाया जाता है। आठवें महीने मायके से पूरी-पुवा आते हैं। इन्हें लेकर सास बहू की ओली भरती है। इसे 'ओली पड़ना' कहते हैं। नवें महीने में मायके से लील-लँहगा आता है। ये भी पहले देवताओं को चढ़ते हैं। तदनन्तर गर्भिणी लँहगा पहिनकर ऊपर से नीली ओढ़नी ओढ़ती है। इसके बाद वह न तो नदी में स्नान करने जाती है, और न घर बटोरती है। ये सब बातें प्रथम बार गर्भवती होने पर ही होती हैं। सम्पन्न घरों में प्रथम बार गर्भवती होने पर मायके से चाँदी का छत्र और चंदन की पिढुली आती है। दम्पति छत्र के नीचे पिढुली पर बैठकर स्नान करते हैं। इसे साधन बैठना कहते हैं।

प्रसव के लिए चमारिन आती है। वह तीन दिन तक सोवर (प्रसूतिगृह) में ही रहती है। उस समय तक प्रसूता दूध पीकर ही रहती है। अन्न नहीं खाती। चमारिन के चले जाने पर हेलुवा खाती है। मिर्च, पीपर और पीपरामूर का चेरुवा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(कथित जल) पीती है। भात में हल्दी, हर्र और नमक डालकर तथा भात को घी में सानकर खाती है। इसे बेलुई कहते हैं।

प्रसूता स्त्री अपनी चारपाई में सदैव लौह रखती है। और बाहर शौचादि के लिए निकलने पर भी लौह लेकर जाती है। विश्वास है कि ऐसा करने से प्रेतात्माओं से किसी प्रकार का अनिष्ट होने की आशंका नहीं रहती। सोवर के अंदर चारपाई में लड़का अकेले नहीं छोड़ा जाता। कोई न कोई चारपाई का स्पर्श अवश्य किये रहता है। विश्वास किया जाता है कि अकेले बच्चे को भूत-प्रेत आदि कष्ट पहुँचाते हैं।

सोवर के दिनों में न तो कोई वस्तु कड़ाही में पकाई जाती है और न भड़भूजे के यहाँ से चबैना ही भुनवाया जाता है। विश्वास है कि भुनवाने से बच्चे के शरीर में फफोले पड़ जाते हैं।

प्रसव होने पर चलनी में अनाज लेकर नाइन और चमारिन को लुवाने जाते हैं। लड़का होने पर दो पैसा और लड़की होने पर एक पैसा चमारिन को देते हैं। बच्चे को नहला लेने के बाद चमारिन की ओली में गुड़ डालते हैं। इसे 'धोवन' कहते हैं। अंत में चमारिन के बिदा होते समय हरदी, गुड़ और पाँच परी तैल विदाईस्वरूप देते हैं।

दस्थान या दस्टौन के दिन आम की पत्ती के पत्तल बनाये जाते हैं। उसी में सब तरह के पकान्न जैसे कढ़ी, फुलौरी, भात, दाल, प्रसूता को खाने के लिए देते हैं। सात और सौभाग्यवती स्त्रियाँ प्रसूता के साथ बैठकर खाती हैं। प्रसूता गोद में बालक लिये रहती है। सामने कलश जलाकर रखते हैं। प्रसूता बालक को गोद में छिपाकर भोजन करती है। विश्वास है कि यदि नवजात शिशु कलश की लौ को देख ले तो अंधा हो जाता है। इस दस्तूर को पनवार कहते हैं। पनवार खाने के बाद बच्चे की माँ फलों में से किसी एक फल को न खाने का संकल्प करती है। उस फल को वह तभी खाती है जब घर में नव-विवाहित वधू आती है, और वह अपने हाथ से त्यागा हुआ फल काटकर उसे खिलाती है।

यदि संतान मूल नक्षत्र में होती है तो स्त्री तीस दिन प्रसूति-गृह में रहती है और कहा जाता है कि उसके 'सतइसन' लड़का हुआ है। सत्ताइस दिन में फिर वही नक्षत्र आता है और तभी मूल नक्षत्र का दोष उतरता है। इसी से उसे 'सतइसन' कहते हैं। सतइसा में पति पत्नी को नहीं देख सकता। स्त्री भी उतने दिन सूर्य के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दर्शन नहीं कर सकती। इसलिए सूर्योदय के बाद वह बाहर नहीं निकलती। सतइसा में जो कपड़े पहनकर स्त्री संतान-प्रसव करती है वे धोबिन को नहीं दिये जाते। घड़े में भरकर रख दिये जाते हैं। तीसवें दिन सतइसा का दोष मोचन कराते समय स्त्री वह कपड़े पहिनती है। सतइसा कराने के लिए सात टोंटी का एक घड़ा बनवाया जाता है। वह घड़ा तीन लकड़ी से बनी हुई टिकटी के सहारे रख दिया जाता है। उसी के नीचे दम्पति बैठते हैं। नाइन टोंटिया से पानी गिरा गिराकर उन्हें नहलाती है। दोनों की उतारी हुई धोतियाँ नाइन अपने लिए ले जाती है। तदनन्तर संतान को पिता के कंधे पर बिठाल कर नीचे रक्खे हुए कटोरे के तेल में पिता से उसकी परछाई देखने को कहा जाता है।

तीन लड़कियों के बाद यदि किसी स्त्री के पुत्र पैदा हो तो उसे 'तेतरा' कहते हैं। विश्वास किया जाता है कि तेतरा पुत्र होने से या तो धन-वृद्धि होती है या धन-क्षय होता है। इसलिए इसके दोष-मोचन के लिए फूल की थाली के ऊपर तेल-हँड़ी और नमक रखने का पात्र इस प्रकार गिराते हैं कि उससे तीनों वस्तुएँ फूट जायें।

गर्भिणी की बाईं आँख छोटी होने पर लड़की और दाहिनी छोटी होने पर लड़का होने का विश्वास प्रगट किया जाता है। इसी तरह पहले बायें स्तन से दूध निकले तो लड़का और दाहिने से निकले तो लड़की होने का अनुमान लगाते हैं।

सोवर में रहते समय प्रसूता तीन बार स्नान करती है। प्रथम तो प्रसव के तीन दिन बाद जबकि चमारिन जाती है। दूसरे छठी के दिन। तीसरा स्नान दस्थान के दिन होता है। दूसरे स्नान में प्रसूता की लट चावलों से धोई जाती है।

दस्थान के दिन सोवर की सफ़ाई लड़के की बुआ या इसी प्रकार के रिश्ते की कोई स्त्री करती है, और नेग माँगती है। पुत्र के दस्थान के बाद 'बरहौं' होता है। उस दिन ब्राह्मण तथा आत्मीय-जनों को भोजन कराया जाता है। उसी दिन बुआ लड़के के लिए जो सामान भेंटस्वरूप लाती है उसे दौरी में सजाकर मस्तक में रखकर स्त्रियों के समूह के आगे-आगे गाजे-बाजे के साथ चलती है। दौरी को वह आत्मीय जनों और कुटुम्बियों के द्वार पर ले जाती है। लोग इस दौरी में कुछ रुपया दस्तूर के तौर पर डाल देते हैं। साथ ही उसमें पाँच चुकरियों में गुड़ और चावल भर दिया जाता है और प्रत्येक के ऊपर दीपक जलाकर रक्खा जाता है।

गर्भिणी के प्रसव होने पर पंडित से पीपर बाँटने की घड़ी (सायत) पूँछी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जाती है। पहले दिन कुल की जठेरिन (जेठी स्त्री) दूध से पीपर पीसकर तिल के तेल में प्रसूता को खिलाती है। दस्तूर के रूप में उसे सोंठ, गुड़, पीपल पाँच-पाँच की संख्या में, और दो पैसे दिये जाते हैं। प्रसूता भी अलग से कुछ दस्तूर भेंट करती है। इसके बाद पीपल रोज बाँटकर खिलाते हैं। पर जठेरिन रोज़ यह काम नहीं करती।

प्रसव के कष्ट-साध्य होने पर गर्भिणी को चक्रव्यूह खींचकर दिखाया जाता है। स्त्री को छूकर आदमियों की पंक्ति पास के जलाशय तक खड़ी कर दी जाती है। लोग एक दूसरे का स्पर्श किये रहते हैं। ऐसा विश्वास है कि इससे बच्चा शीघ्र पैदा हो जाता है।

प्रसूता सवा महीने तक किसी जलाशय के पास तक नहीं जाती। घाट पूजने का दस्तूर हो चुकने के बाद ही वह कुएँ, तालाब आदि पर पानी भरने या नहाने जाती है। बच्चे को नज़र या टौना लग जाने की संभावना होने पर स्त्रियाँ एक दीपक में दो बाती जलाकर थाली में भरे हुए पानी के ऊपर रख देती हैं। उसके ऊपर उल्टा घड़ा रखती हैं। विश्वास है कि जितना पानी घड़े की पेंदी में चढ़ जाता है उतनी ही नज़र बच्चे को लगी थी। परन्तु यह तो भौतिक विज्ञान का एक प्रयोग मात्र है। दीपक के जलने से घड़े के भीतर की आक्सीज़न नामक गैस ख़र्च हो जाती है, और उसके रिक्त स्थान को पूरा करने के लिए थाली का पानी ऊपर चढ़ जाता है।

प्रसव के दिन समीप आने पर गर्भिणी लाल रंग के कपड़े तथा सुगंधित द्रव्यों का व्यवहार नहीं करती, क्योंकि वैसा करने से प्रेत-बाधा आदि का भय रहता है।

---

(३)

श्रीरामस्वरूप योगी

शिशु के गर्भ में आते ही उस जन्मदात्री माता के प्रति सम्पूर्ण घरवालों के मन में मनोहर भाव उत्पन्न हो जाते हैं। बालक के गर्भ में आ जाने पर स्त्री को चौक में बिठाया जाता है। स्त्रियाँ गीतादि गाती हैं। जिसे गर्भाधान-संस्कार और जनता में फूलचौक कहते हैं। फूलचौक के बाद जिस स्त्री के पहिले ही पहिल बच्चा पैदा होता है, उसका आठवें महीने में पुंसवन संस्कार यानी 'आगन्ना' होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आगन्ने में स्त्री का भाई भावी सन्तानार्थ अपनी शक्ति के अनुसार कपड़े, सोने-चाँदी के आभूषण आदि और बहिन के लिए भी वस्त्र और मिठाई आदि लाता है। इन वस्तुओं को नाई या नाइन लेकर आगे होती हैं और पीछे पीछे स्त्रियाँ गाजे बाजे के साथ गाँव की प्रदक्षिणा करती हैं। इसे 'बिन्नाइकी फिराना' कहते हैं। दूसरे दिन बिरादरी के सब लोगों को भोज दिया जाता है।

गर्भवती होने के बाद घर की बड़ी-बूढ़ी स्त्रियाँ उस स्त्री को बाहर के किसी गाँव में नहीं जाने देतीं और न किसी नदी को पार करने देती हैं, क्योंकि वे समझती हैं कि इससे गर्भ को हानि पहुँचती है।

बालक का जन्म होने पर यदि पुत्र हुआ तब तो बड़ा आनन्द मनाया जाता है, किन्तु कन्या के उत्पन्न होने पर उतनी खुशी नहीं मनाई जाती। प्रसव के तीसरे दिन 'सोर' उठती है। पाँचवें दिन 'पच' और दशवें दिन 'दशटौन' होता है। दशटौन के दिन स्त्रियाँ प्रसूता को कुएँ पर कुआँ पूजने गाती-बजाती ले जाती हैं। उधर से लौटने पर चने या ज्वार के बिला (कौंहरी), बताशा, गुड़ आदि सभी को बाँटा जाता है। बच्चे को पालने में झुलाते हैं और फुआ-फूफा के यहाँ से आये हुए वस्त्रादि उसे पहनाते हैं। महीने दो महीने बाद बालक को बाहर निकालते हैं। यदि किसी की संतान जीवित न रहती हो तो उसे चक्की के नीचे से निकालते हैं, सूप में रखकर घसीटते हैं, और चूल्हे की राख में लोटालते हैं। इस प्रकार संतान को जीवित रखने के लिए बहुत से टोना-टोटका किये जाते हैं। उसे किसी के हाथ बेच देते हैं, और उसे रुपया देकर फिर मोल ले लेते हैं। उसकी नाक छिदा कर उसका नाम 'नत्थू' रख देते हैं। इसी तरह उसके कड़ोरे, लटोरे, घसीटे, आदि नाम भी रख दिये जाते हैं।

बालक को नज़र से बचाने के लिए उसके माथे पर काजल का डिठौना लगाते हैं। अगर उसे नजर लग गई हो तो घर की स्त्रियाँ राई-नोन से उसकी नज़र उतारती हैं। इसके लिए नमक या मिर्चों को अग्नि में डालती हैं। बाहर की कोई स्त्री या पुरुष यदि बालक को गोद में लेकर खिलावे तो उसके चले जाने पर उस स्त्री या पुरुष के पैरों तले की धूल बच्चे के सिर से लगा दी जाती है, ताकि नज़र लगने की कोई आशंका न रहे।

जब तक बालक एक वर्ष का नहीं हो जाता तब तक उसकी माँ उसे लेकर अपने मायके या अन्यत्र बाहर नहीं जाती।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भूत-प्रेत आदि की बाधा से बालक की रक्षा करने के लिए उसके गले में लहसुन की पोथियाँ छेदकर बाँधते हैं। छिपकली की पूँछ काटकर तावीज़ में भरकर डालते हैं। बाज़ार में दो एक पैसे में मिलने वाला छोटा चाकू धागे में पिरोकर बाँधते और किसी से गंडा-तावीज़ बनवाकर पहनाते हैं।

बच्चे की तबियत ख़राब होने पर उसकी झाड़ फूँक ही अधिक होती है। मेहतरानी की झाड़ू से उसे झड़वाते हैं। बच्चे के ऊपर से कच्ची-पकी अठवाई* उतारकर किसी चौराहे पर रख आते हैं। माँ को कभी आक के वृक्ष के पास नहीं जाने देते, क्योंकि उससे दूध के सूख जाने की आशंका रहती है। यदि उसी दिन या उसी पखवारे में किसी दूसरे घर की स्त्री के यहाँ बालक पैदा हुआ हो तो वह स्त्री उस मार्ग से नहीं जाती, न उसको देखती है। यदि उस रास्ते से जाना बहुत आवश्यक हुआ तो एक स्त्री दूसरी स्त्री के चरण छूकर उसे कुछ पैसे देकर अपना आना-जाना, बोलना-चालना शुरू कर देती है। घर या मुहल्ले की बूढ़ी स्त्रियाँ बहुधा नव-प्रसूता को शिक्षा दिया करती हैं कि अपना बच्चा किसी को न दिया करो। घर में उसे अकेला मत छोड़ा करो। उसके पास अगिन तथा लोहे का हँसिया या चाकू रख दिया करो। हाथ पैर बिना धोये घर में न जाया करो। अपना दूध बाहर से आने पर धरती पर चढ़ाकर धोकर पिलाया करो, इत्यादि।

बच्चे को यदि एक वर्ष के भीतर सूखी आदि की बीमारी हो गई तो किसी की भैंस या काली गाय की पूँछ से उसे झाड़ देते हैं। विश्वास किया जाता है कि उससे रोग की निवृत्ति होकर उस पशु को सूखी रोग लग जाता है। किसी बीच रास्ते में बिठाकर उसे नहलाते हैं, ताकि उसका रोग किसी दूसरी स्त्री के नवजात शिशु को लग जाये। उसे जान बूझकर इतवार, बुधवार किसी ऐसे घर में ले जाते हैं जहाँ हाल में ही बच्चा पैदा हुआ हो। रोगी बच्चे वाली माता लुक छिपकर किसी दूसरे के बच्चे को अपना दूध पिला देने की चेष्टा भी करती है। अपने बच्चे का जूठा पानी भी उसे पिलाती है। ये सब काम वह इस विश्वास के आधार पर ही करती है कि उससे दूसरे का बच्चा रोगी होकर स्वयं उसका बच्चा रोग-मुक्त हो जायेगा।

बच्चे के दाँत निकलने पर मछली अथवा किसी अन्य जीव के दाँत उसके गले में डाल देती हैं ताकि स्वयं बच्चे के दाँत निकलने में कष्ट न हो। उसकी आँखें दुखने पर एक थाली में पानी भरकर जेवरिया में कुछ रुई लपेटकर उसे तेल में

* पूड़ी की तरह का एक छोटा पकान्न।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

डुबोकर जलाते हैं और उस बच्चे के चारों तरफ़ फिराकर उसे पानी के ऊपर रखते हैं। उसमें से जितनी बूँदें नीचे टपकती हैं उतना ही यह समझा जाता है कि बच्चे को लगी हुई नज़र उतर गई है। फिर उस पानी को ले जाकर किसी चौराहे पर डाल आते हैं। बच्चे को जब कोई रोग हो जाता है तो उसके पहिनने के कपड़ों को चिरायते में रँगकर उसे पहिना देते हैं। (परन्तु इसे अंध-विश्वास नहीं कह सकते। स्वास्थ्य की दृष्टि से चिरायता लाभकारी हो सकता है।—ले०)

बच्चे के एक वर्ष के होने के पूर्व उसकी पासनी (अन्नप्राशन संस्कार) की जाती है जिसमें सजातीय स्त्रियों को पूड़ियाँ आदि बाँटी जाती हैं। उसे करधनी पहिनाई जाती है। जब वह साल भर का हो जाता है तब उसका मुंडन-संस्कार किसी एक विशेष तिथि को होता है। यह कार्य अक्सर बच्चे को किसी देवी-देवता के स्थान पर ले-जाकर सम्पन्न किया जाता है। इस अवसर पर सभी नाते रिश्तेदारों की स्त्रियाँ आती हैं। बिरादरी में न्यौता दिया जाता है। पंगत होती है। स्त्रियों को बताशा, मिठाई आदि बाँटी जाती है। मुंडन से बच्चे के जो बाल निकलते हैं उनको गेहूँ के गुँधे हुए आटे की लोई में रखकर किसी तीर्थ स्थान में छोड़ आते हैं, अथवा गंगा-यमुना ऐसी नदियों में बहा देते हैं। किसी-किसी के यहाँ मुड़ने के समय सिर के पीछे चोटी रखवा देते हैं, इसे चेंच कहते हैं। इसे अपने कुल देवता की किसी विशेष पूजा के दिन मुड़वा देते हैं। इसे चेंच उतरवाना कहते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

छक्का-चपेटा

(बुन्देलखंडी बालिकाओं का एक रोचक खेल)

श्री रामस्वरूप योगी 'साहित्य-शास्त्री'

[नृशास्त्र की दृष्टि से बालकों के खेल अपना एक विशेष महत्त्व रखते हैं। लोक-वार्त्ता परिषद् की ओर से उनका विधिवत् संग्रह हो रहा है। यहाँ हम एक खेल का विवरण पाठकों की भेंट करते हैं, जिसकी परंपरा बड़ी प्राचीन है। वह संसार के अनेक देशों में प्रचलित रहा है। पत्रिका के आगामी अंक में हम उस पर विस्तार से लिखने का विचार रखते हैं।—सम्पादक]

श्रावण के महीने में लड़के जिस प्रकार चकरी, भौंरा खेलते हैं, उसी प्रकार बुन्देलखंड में लड़कियाँ छक्का-चपेटा खेलती हैं। यह उनका एक प्रिय खेल है, और इस प्रान्त में सर्वत्र खेला जाता है। छोटी लड़कियों के साथ युवतियाँ भी उसे बड़े चाव से खेलती हैं।

यह खेल मिट्टी, चीनी मिट्टी, अथवा लाख के बने चपेटों से खेला जाता है जो कि बाज़ार में बने मिलते हैं, अथवा लड़कियाँ ही मिट्टी से उनको घर पर बना लेती हैं। ये पौन इंच के छःपहले (cube) होते हैं, और प्रायः लाल, पीले, हरे, काले रँग दिये जाते हैं। इनको कहीं-कहीं छक्का भी कहते हैं। इसीलिए इस खेल का नाम छक्का-चपेटा पड़ गया। हम उसे संक्षेप में चपेटा ही कहेंगे। इस खेल को खेलने के लिए पाँच, सात, नौ अथवा ग्यारह चपेटे लिये जाते हैं। पर अधिकतर यह खेल नौ चपेटों से ही खेला जाता है।

खेल में दो या दो से अधिक कितनी भी लड़कियाँ भाग ले सकती हैं। यदि इनकी संख्या चार या छः हुई तो दो-दो लड़कियाँ आपस में गुइयाँ (मित्र,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

Partner) बनकर खेलती हैं, और यदि तीन, पाँच, या सात, इस तरह ऊनी हुई तो फिर सब अपना स्वतंत्र खेल खेलती हैं।

खेलने के लिए लड़कियाँ थोड़े-थोड़े अंतर पर घेरा बनाकर बैठ जाती हैं। खेल को कोई भी लड़की प्रारंभ कर सकती है। उससे कोई अंतर नहीं पड़ता।

मान लीजिए कि यह खेल नौ चपेटों से खेला जा रहा है तो सबसे पहले तो, खेलनेवाली लड़की चपेटों को ऊपर उछालकर हाथ में झेलती है, और फिर उनको इस प्रकार नीचे फैला देती है कि वे एक दूसरे का स्पर्श न करें। तब वह एक चपेटे को हाथ में लेकर ऊपर उछालती हुई, और नीचे फैले हुए चपेटों में से एक चपेटे को सफ़ाई के साथ उठाती हुई, उसे झेलती है। उसे एक साथ ही नीचे के चपेटे को उठाना, तथा ऊपर उछाले हुए चपेटे को झेलना पड़ता है। इस प्रकार एक चपेटे को ऊपर उछालती हुई एक-एक करके वह आठों चपेटे नीचे से उठाती है। ऐसा करते समय उसे इस बात का ध्यान रखना पड़ता है कि दूसरे चपेटे से उसका हाथ न लगने पाये। यदि नीचे से चपेटे को उठाते समय ऊपर का चपेटा उसने न झेल पाया अथवा उन आठ छक्कों में से एक-एक करके उठाने में दूसरे चपेटे से हाथ लग गया या वह हिल गया, अथवा नीचे का छक्का ही उसने किसी प्रकार न उठा पाया, अथवा हाथ में से छूट गया तो वह खिलाड़ी लड़की 'डूकी' हुई मानी जाती है, अर्थात् उसका खेलना समाप्त समझा जाता है। तब दूसरी लड़की छक्के हाथ में लेती है और पहली की भाँति खेलती है, और यदि उस लड़की ने एक-एक करके आठों छक्के जैसे चाहिए वैसे उठा लिये तो फिर वह चपेटों को दुबारा पारती है। ऊपर तो यह 'इकिया' हुई। अब वह लड़की 'दुजिया' लेती है। इसके लिए आठ चपेटों को इस प्रकार नीचे पारती है कि दो-दो चपेटे कुछ पास-पास गिरें। कोशिश तो वह यही करती है। फिर जैसा भी हो। अब वह हाथ के नवें चपेटे को ऊपर उछालती हुई एक-एक करके दो-दो चपेटों की जोड़ी को उठाती है। यहाँ भी उसको इस बात का ध्यान रखना पड़ता है कि चपेटे हिलने न पायें। 'दुजिया' के बाद वह 'तिजिया' खेलना प्रारंभ करती है। इसके लिए वह दो दफ़े तीन-तीन और एक दफ़े शेष दो चपेटे उठाती है। 'तिजिया' के बाद 'चुरिया' उठाती है। इसमें चार-चार चपेटे उसे एक-एक करके दो बार उठाना पड़ते हैं। फिर 'पचिया' का नंबर आता है, जिसमें एक दफ़े पाँच और दूसरी दफ़े शेष तीन चपेटे उठाना पड़ते हैं। इसके बाद 'छकिया' 'छकिया' कहती हुई वह 'छकिया' पूरी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

करती है, और फिर सतिया लेना शुरू करती है। 'सतिया' 'सतिया' कहती हुई नीचे फैले हुए आठ चपेटों में से वह सात चपेटे, अपने हाथ के एक चपेटे को ऊपर उछालती हुई उठाती है। फिर दुबारा उस एक बचे हुए चपेटे को उठाती है। इस प्रकार सतिया पूरा होता है। यह मैं पुनः कह देना चाहता हूँ कि डूकने का नियम प्रत्येक बार के लिए सब खिलाड़ी लड़कियों पर उसी प्रकार लागू होता है जिस प्रकार कि 'इकिया' लेते समय बताया गया है। 'सतिया' के बाद 'अठिया' लेना पड़ता है। इसके लिए वह हाथ के चपेटे को झेलती हुई नीचे के आठों चपेटे एक साथ उठाती है और कहती जाती है—'हम पूरे, हम पूरे।' इस प्रकार जब वह उठा लेती है तो उसका एक खेल पूरा समझा जाता है। तब फिर वह दूसरा खेल प्रारंभ करती है और यदि वह बीच में ही डूक गई, अर्थात् ऊपर के इस खेल को वह पूरा नहीं कर सकी तो फिर चपेटे दूसरी लड़की के हाथ में पहुँच जाते हैं।

यह चपेटों के खेल का मूल रूप है। आगे चलकर जो खेल खेले जाते हैं, वे सब इसी सिद्धान्त के आधार पर। खेलनेवाली लड़की दाहिने हाथ से एक या दो अथवा अधिक चपेटों को ऊपर उछालकर नीचे फैले हुए चपेटों से आवश्यकतानुसार एक या अधिक चपेटों को फुर्ती से उठाकर उछाले हुए चपेटों को झेलती है। खेलने की क्रिया या अभिनय के अनुसार खेलों के विभिन्न नाम रक्खे गये हैं। जैसे 'मक्खी बिडारना', 'बरी तोड़ना', 'करेला लेना', 'मुँह मूदा', 'मुँह बोला' आदि। ये सब खेल क्रम से खेले जाते हैं। स्थान-भेद से उनमें कुछ अंतर भी हो सकता है। अब यहाँ हम संक्षेप में उनकी विधि लिखते हैं। प्रत्येक दशा में चपेटों को नीचे पारना पड़ता है (जहाँ ऐसा नहीं होता वहाँ लिख दिया गया है) और आवश्यकतानुसार एक या अधिक चपेटों को उछालने के लिए हाथ में रखना पड़ता है।

मक्खी बिडारना—इकिया, दुजिया का खेल समाप्त कर लेने के बाद मक्खी बिडारने का खेल होता है। खिलाड़ी लड़की चार चपेटों को अपने हाथ की दो-दो अँगुलियों के बीच में दबा लेती है। फिर हाथ को इस प्रकार हिलाती हुई मानों मक्खियाँ बिडार रही है एक चपेटा नीचे गिरा देती है और साथ ही दूसरे हाथ से एक चपेटा झेलती हुई नीचे गिरे हुए चपेटे को उठाती है। इस प्रकार चारों चपेटों को लेने के बाद दूसरे चार चपेटे भी उठाती है। इसे ही 'मक्खी बिडारना' कहते हैं।

बरी तोड़ना—खिलाड़ी लड़की एक चपेटे को ऊपर उछालती हुई नीचे

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

फैले हुए आठ चपेटों में से एक चपेटा ऊपर उठाती है और उसे अँगूठे तथा उसके निकट की अँगुली के बीच में दबा लेती है। अब वह पुनः चपेटे को ऊपर उछालकर और अँगुलियों के बीच में दबे हुए चपेटे को नीचे गिराकर नीचे से दूसरा चपेटा उठाती है। ऐसा वह नौ बार करती है। हर दफ़े दो चपेटे उसके हाथ में रहते हैं। एक को नीचे गिराती है और दूसरा उठा लेती है। एक चपेटा उछालने के लिए तो उसके हाथ में रहता ही है।

करेला लेना—'करेला' लेने के लिए एक के स्थान पर एक साथ दो चपेटे ऊपर उछाले जाते हैं। उनको झेलकर लड़की नीचे के सात चपेटे एक-एक करके उठाती है। यदि ऊपर के दो चपेटों से एक भी चपेटा नीचे गिर गया या नीचे के चपेटे उठाने में चूक गई तो वह डूकी हुई मानी जाती है।

मुँह मूदा—खिलाड़ी लड़की मौन धारण करके चपेटे को उछालती हुई एक-एक करके नीचे के आठ चपेटे उठाती है। खेलते समय उसे बिलकुल चुप रहना पड़ता है। अगर मुँह से थोड़ी भी आवाज़ निकली, या वह हँस पड़ी तो फिर उस खेल को दूसरी लड़की खेलती है।

मुँह बोला—आठों चपेटों को नीचे फैलाकर लड़की उनको 'हम बोले' 'हम बोले' कहकर पहले की भाँति उठाती है, 'हम बोले' कहने में उसे एक बार भी चूकना नहीं चाहिए।

सींकें लेना—इस खेल में लड़की नीचे फैले हुए चपेटों में से एक चपेटा उठाती है, और दूसरे हाथ से दो चपेटे ऊपर उछालती जाती है, और फिर उनको इस क्रम से लेती है कि उनमें से एक चपेटा एक हाथ में आ जाता है और दूसरा दूसरे हाथ में। यदि उसने उन चपेटों को एक ही हाथ में ले लिया या नीचे का चपेटा न उठा पाया तो वह डूकी हुई मानी जाती है। अगर बराबर उठाती गई तो खेल आगे बढ़ता है। इस खेल को 'उरई की सींकें' लेना कहते हैं। उरई एक घास का नाम है।

गलफुल्ला—लड़की हाथ के एक चपेटे को ऊपर उछालती हुई नीचे के आठ चपेटों को एक-एक करके उठाती है और प्रत्येक बार अपने गाल फुलाती जाती है। इसे ही गलफुल्ला कहते हैं।

दाँत काढ़ना—पहले की ही भाँति चपेटे को झेलते और नीचे के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चपेटे को उठाते समय दाँत काढ़ना पड़ते हैं। कहने की आवश्यकता नहीं कि दाँत काढ़ना अगर वह भूल जाये तो चूकी हुई मानी जाती है।

पिड़ी बुनना—खिलाड़ी लड़की सभी चपेटों को एक गोल घेरे में रख देती है और फिर एक एक चपेटे को ऊपर उछालती हुई नीचे के एक चपेटे सहित उसको हाथ में लेती जाती है।

चटके लेना—उछाले हुए चपेटे को वह प्रत्येक बार इस प्रकार हाथ में लेती है कि नीचे से उठाये हुए चपेटे पर वह चट से आकर गिरे। अर्थात दोनों चपेटों के आपस में टकराने से चटपट की आवाज़ होनी चाहिए।

फुसके लेना—यह 'चटके लेने' से ठीक विपरीत है। इसमें नीचे का चपेटा उठाते, और ऊपर का उछाला हुआ चपेटा हाथ में लेते समय किसी प्रकार की आवाज़ नहीं होनी चाहिए।

सुँगरिया बेंड़ना या छेंकना—खेलनेवाली लड़की बायें हाथ की पाँचों अँगुलियों को पृथिवी पर सीधा खड़ा करके रखती है और उन्हें थोड़ा फैला देती है। तब दाहिने हाथ से उन अँगुलियों के बीच के चारों स्थानों पर एक-एक चपेटा रख देती है। अब वह एक चपेटा ऊपर उछालती है, और जब तक कि वह नीचे लौटकर आये तब तक वह अँगुलियों के बीच में रक्खे हुए चपेटों में से एक चपेटे को हथेली के दूसरी ओर फेंक देती है। इस प्रकार उसे चार बार करना पड़ता है। फिर उसी एक चपेटे को उछालते हुए उन चारों चपेटों को फिर यथास्थान रखना पड़ता है। इसी खेल को वह एक बार और दुहराती है। इसे ही 'सुँगरिया बेंड़ना' या छेंकना कहते हैं। कई जगह लड़कियाँ इस खेल को अन्त में खेलती हैं। इसके बाद चपेटों का खेल समाप्त माना जाता है। जो भी हो, यह खेल सचमुच बड़ा मनोरंजक है। इससे लड़कियों के हस्तकौशल का सुन्दर परिचय मिलता है।

नसैनी लेना—नसैनी बनाने के लिए दो चपेटे प्रायः एक बालिश्त की दूरी पर रख दिये जाते हैं। खिलाड़ी लड़की एक चपेटे को ऊपर उछालकर उसे झेलने के पूर्व ही इन दोनों चपेटों को समेटकर उठाती है, और साथ ही ऊपर का चपेटा झेलती है। इस प्रकार उसके हाथ में तीन चपेटे हो जाते हैं। इसी प्रकार वह शेष छः चपेटों को भी उठाती है। इसे वास्तव में छोटी नसैनी लेना कहते हैं। एक बड़ी नसैनी भी होती है। उसमें चपेटे एक बालिश्त की बजाय दो बालिश्त की दूरी पर रक्खे जाते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हुक्का पीना—छोटी और बड़ी नसैनी लेने के बाद हुक्का पीने का खेल होता है। इसमें खिलाड़ी लड़की दाहिने हाथ का अँगूठा ओठों से लगाकर चपेटा ऊपर उछालती है, और जब तक वह नीचे नहीं आ जाता तब तक अँगूठा लगाये हुए कहती जाती है 'हम हुक्का पियें' 'हम हुक्का पियें' और साथ ही नीचे के चपेटे को उठाकर उसे झेलती है।

पापड़ बेलना—यह खेल हुक्का पीने के समान ही है। इसमें एक हाथ से पापड़ बेलने का नाट्य करते हुए और दूसरे से चपेटा उठाते और झेलते हुए लड़की कहती जाती है—'हम पापड़ बेलें' 'हम पापड़ बेलें'।

सुपारी काटना—इस खेल के लिए हाथ में दो चपेटे लिये जाते हैं। एक चपेटे को लड़की ऊपर उछालती है और दूसरे को दो अँगुलियों के बीच में दबाकर सुपारी काटने का नाट्य करती है और कहती है 'हम सुपारी काटें' 'हम सुपारी काटें'। साथ ही नीचे से एक चपेटा उठाकर उछाले हुए चपेटे को हाथ में लेती है। इस प्रकार उसे एक साथ तीन स्थानों पर अपना ध्यान बाँटना पड़ता है और तीन काम करना पड़ते हैं।

अनमछिया लेना—इसमें चपेटों को एक-एक करके उठाते समय केवल इस बात का ध्यान रखना पड़ता है कि किसी चपेटे पर मक्खी न बैठने पाये।

मछिया लेना—यह ठीक उससे उलटा है। खिलाड़ी लड़की को नीचे फैले हुए चपेटों में से किसी एक पर मक्खी के बैठने की प्रतीक्षा करनी पड़ती है। जिस चपेटे पर मक्खी बैठ जाती है उसी को हाथ के चपेटे को झेलकर वह उठाती है। मक्खियाँ अगर न बैठें तो लड़की इस बात का प्रयत्न करती है। इधर-उधर से मक्खियों को हाँककर चपेटों पर बिठालने की कोशिश करती है।

मटकी फोड़ना—इसमें पहले सभी चपेटों को नीचे फैला देना पड़ता है। फिर ऊपर एक चपेटे को उछालते हुए नीचे का चपेटा उठाने के साथ उसी चपेटे से किसी दूसरे चपेटे में ठोकर मारते हुए ऊपर के चपेटे को झेलते हैं। यही मटकी फोड़ना है।

औंधे और सीधे डब्बा—इसके बाद औंधे और सीधे डब्बा खेलना पड़ते हैं। यह इस प्रकार कि नीचे के चपेटे को उठाकर ऊपर के चपेटे को झेलते हुए दोनों चपेटों को बाएँ हाथ से ढकना पड़ता है। इसी ढकने को औंधे डब्बा लेना कहते हैं। फिर इसी तरह बाएँ हाथ को उलटा करके ढकते हैं, अर्थात् हथेली के ऊपर खुली हथेली रहती है। यह सीधा डिब्बा खेलना कहलाता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कौआ लेना—इसमें चपेटे को नीचे से उठाकर और उछाले हुए चपेटे को झेलकर दाहिने हाथ को कौए की चोंच की तरह करके नीचे की ओर घुमाते हैं। यही कौआ लेना है। सभी खेलनेवाली लड़कियों को यह खेलना पड़ता है।

फक्का फारना—दो चपेटों को ऊपर उछालकर नीचे के एक चपेटे को उठाते हुए जो ऊपर दो चपेटे झेले जा रहे हैं उन्हें एक-एक हाथ में ऊपर ही विभक्त कर देना पड़ता है। अर्थात् एक चपेटा दाहिने हाथ में और दूसरा बायें हाथ में झेलना पड़ता है। साथ ही दाहिने हाथ से नीचे का छक्का उठाना भी पड़ता है। इसी प्रकार सभी छक्के उठाना पड़ते हैं।

झूमका लेना—इस खेल में नीचे के उठाये हुए चपेटों को हाथ में ही रखना पड़ता है, और उनको उछालकर नीचे का चपेटा उठाना पड़ता है। एक चपेटे को उछालकर दूसरा उठाया। इस प्रकार हाथ में दो चपेटे हो गये। अब दो को उछालकर तीसरा उठाया। तीन हो गये। फिर तीनों को उछालकर चौथा उठाया। अन्त तक यही क्रम चलता है। आठ को उछालकर नवाँ उठाना पड़ता है।

हत्ता लेना—यह खेल लड़कियाँ प्रायः ग्यारह चपेटों से खेलती हैं। दोनों हाथों का खोवा बनाकर चपेटों को रख लेती हैं, और फिर उनको उछालकर दोनों हाथों की पीठ पर उनको लेती हैं। लेने के बाद सब चपेटे नीचे गिरा दिये जाते हैं। केवल एक चपेटा दाहिने हाथ में ले लेना पड़ता है। इस प्रकार सभी चपेटे एक-एक करके झेलना पड़ते हैं। जब ग्यारहों चपेटे झेले जा चुकते हैं तब पहले की भाँति ही खोवा बनाकर उनको ऊपर उछालते हैं और उनको दोनों हाथों की पीठ पर लेते हैं। इस पर एक के स्थान पर दो चपेटे दाहिने हाथ में ले लिये जाते हैं। शेष नीचे गिरा दिये जाते हैं। यही क्रम पूरे चपेटे लेने तक चलता है। अर्थात् दो-दो चपेटे चपेटों की संख्या पूरी होने तक झेलना पड़ते हैं। फिर चार-चार, उसके बाद पाँच-पाँच, फिर छः और फिर सात, फिर आठ और फिर नौ इसके बाद दस और अन्त में ग्यारहों चपेटे खोवा में लेकर दोनों हाथों की पीठ पर ले जाकर फिर हथेली में लेना पड़ते हैं।

बहुएँ लेना—इस खेल में खिलाड़ी लड़की नौ चपेटों को दाहिने हाथ की हथेली पर लेकर उन्हें धीरे से उछालती है, और फिर हाथ को उलटा करके पृष्ठभाग पर ले लेती है। इसके बाद उनको फिर हथेली पर लेती है। इस प्रकार जितने चपेटे आ जाते हैं उतनी ही बहुएँ समझी जाती हैं। इस प्रकार नौ बार लेना पड़ती हैं। यदि

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हाथ की पीठ पर कभी तीन चपेटे आ गये तो वह लड़की डूकी हुई समझी जाती है।

इस प्रकार चपेटों का यह खेल पूरा होता है। अपनी ओसरी या बारी आने पर सभी लड़कियों को ऊपर के खेल खेलना पड़ते हैं और डूकने या चूकने का नियम सबके साथ समान रूप से लागू होता है। जो जिस खेल में डूक या चूक जाती है उसे फिर अपना नंबर न आने तक चुपचाप बैठना पड़ता है। नंबर आने पर जिस खेल से वह चूकी थी उसी से फिर खेलना शुरू करती है, तथा आगे जब तक किसी खेल में चूक नहीं जाती तब तक खेलती रहती है। लगातार एक के बाद दूसरा खेल खेलते हुए उसे आगे बढ़ना पड़ता है।

इस खेल को प्रायः श्रावण के महीने में सभी छोटे-बड़े घराने की लड़कियाँ खेलती हैं। राजमहलों से लेकर किसानों की झोपड़ियों तक में उसका प्रचार है। जब किसी लड़की का विवाह होता है तो उसकी ससुराल से प्रथम श्रावणी के अवसर पर कपड़े, लाख की चूड़ियाँ, तथा अन्य वस्तुएँ आती हैं। उनमें चपेटे भी अवश्य आते हैं। साधारण व्यक्ति तो लाख के चपेटे ही भेजते हैं, परन्तु बड़े आदमियों के यहाँ बहुधा चाँदी के भेजे जाते हैं।

चपेटों का यह खेल बहुत पुराना जान पड़ता है। बुन्देलखंड के विभिन्न स्थानों में वह विभिन्न प्रकार से खेला जाता है। खेलों के नाम भी अलग-अलग हैं। बड़ा अच्छा हो यदि लोकवार्त्ता के पाठक अपने-अपने स्थानों के खेलों का संग्रह करें। अपर प्रान्तीय पाठकों से भी मेरी प्रार्थना है कि वे यह बताने का कष्ट करें कि उनके यहाँ भी चपेटों का यह खेल प्रचलित है या नहीं, और यदि है तो किस रूप में।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बुन्देलखंडी कहानी

हँसने का कारण

श्रीशिवसहाय चतुर्वेदी

(कहानी-परिचय)

[यह कहानी मैंने अपने निवास-स्थान देवरी से ८ मील दूरी पर स्थित जैतपुर कोपरा ग्राम निवासी नूने पोत्दार के मुँह से तारीख २१ मार्च सन् १९४५ ई० की रात्रि को सुनी थी। नूने पोत्दार की उम्र इस समय ७० वर्ष के लगभग है। पूछने पर उसने बतलाया—'यह कहानी मैंने अपने पिता से सुनी थी।'

इस कहानी में किसी भारत-सम्राट् के ख्यातनामा राजनीति विशारद मंत्री के निधन पर राज्य को मंत्रित्वहीन अथच निर्बल समझकर एक विदेशी सम्राट् ने भारत पर आक्रमण करने का मन्सूबा बाँधा है। प्रथम उसने विविध उपायों द्वारा भारत के बुद्धिबल की थाह लेने का प्रयास किया। परन्तु इस परीक्षण में उसे क्या घर, क्या बाहर, सभी जगह, भारतीय बुद्धि-कौशल का लोहा मानना पड़ा। अतः उसने भारत पर आक्रमण करने का इरादा छोड़ दिया। यही नहीं, उसने तत्कालीन भारत-सम्राट् के मंत्रिपुत्र के साथ, जो अपने पिता के मरने के पश्चात् भारत-सम्राट् का मुख्य सलाहकार और पश्चात् राज्य का मुख्य संचालक था अपनी लड़की ब्याह कर दोनों देशों में हित सम्बन्ध स्थापित किया।

भारतीय इतिहास में मंत्रियों के बुद्धिकौशल द्वारा बड़े-बड़े साम्राज्यों के स्थापित होने तथा उनके सुचारु रूप से चलाये जाने के अनेक दृष्टान्त हैं। कह नहीं सकते, प्रस्तुत कहानी का मूल स्रोत किस प्राचीन ऐतिहासिक घटना से प्रवाहित हुआ है। पर विचार करने पर यूनान सम्राट् सेल्युकस और महाराज चन्द्रगुप्त के चरित्र के साथ इस कहानी का यत्किंचित् सादृश्य अवश्य दिखाई देता है। यूनान-सम्राट् सिकन्दर शाह भारतीय राजा पुरु के साथ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

युद्ध करके भारत के बल-पराक्रम की थाह लेकर विफलमनोरथ हो लौट गया। पश्चात् सेल्युकस यूनान-सम्राट् हुआ। वह एक सुदीर्घ समय तक भारत की सीमा पर रहकर भारत पर आक्रमण करने की अभिसंधि खोजता रहा। अंत को विचक्षण बुद्धि मंत्रिवर चाणक्य के बुद्धि-कौशल से सम्राट् चंद्रगुप्त द्वारा विफलमनोरथ होने पर उसने अपनी लड़की सम्राट चन्द्रगुप्त को ब्याह दी और इस तरह भारत के साथ उसने हितसम्बन्ध स्थापित किया। संभव है इसी घटना को लेकर इस कहानी का जन्म हुआ हो।—लेखक]

किसी समय दिल्ली में एक बादशाह रहता था। राजकाज की उलझनों में उसकी बुद्धि काम नहीं करती थी। सब काम मंत्री के सुपुर्द रहता था। मंत्री बुद्धिमान् था। राज्य की कठिन से कठिन समस्याओं को वह अपनी चतुराई से सुलझा देता था। मंत्री बूढ़ा हो चला था। अभी तक उसके कोई संतान नहीं हुई थी। एक दिन उसे मालूम हुआ, उसकी स्त्री गर्भवती है। मंत्री ने बादशाह से जाकर कहा—"सरकार, मेरी स्त्री गर्भवती है। ईश्वर की कृपा हुई तो नवमें महीने उसके बच्चा पैदा होगा। पर मुझे भासता है उस समय तक मैं जीवित न रहूँगा। बच्चे की देख-रेख और परवरिश आपको करना पड़ेगी। बच्चा बड़ा होने पर आपके राज्य की सेवा करेगा।"

गर्भ के सातवें महीने मंत्री का स्वर्गवास हो गया। बादशाह ने दास-दासियों को ताक़ीद कर दी कि जब मंत्री के घर बच्चा पैदा हो मुझे तुरंत ख़बर दी जावे। कुछ महीने पीछे मंत्री के पुत्र उत्पन्न हुआ। बादशाह को ख़बर दी गई। बादशाह ने मंत्री के घर पहुँचकर खवासन से कहा—"खवासन, मुझे बच्चा दिखाओ।" खवासन बच्चे को अपने हाथों पर रखकर बाहर आई। बादशाह को देखते ही बच्चा ख़ूब खिलखिला कर हँस पड़ा। बादशाह को बड़ा अचंभा हुआ। बच्चा मुझे देखकर क्यों हँसा? दसटौन के दिन बादशाह फिर बच्चे को देखने गया। ज्योंही बच्चे की नज़र बादशाह पर पड़ी वह खिलखिला कर हँसने लगा। बादशाह मन ही मन सोचता, यह लड़का मुझे देखकर क्यों हँसता है? इसका कुछ कारण अवश्य होना चाहिए। वह महीने दो महीने में उसे देखने के लिए जाने लगा। लड़का बादशाह को देखकर हँसा करता था। धीरे-धीरे बच्चा कुछ बड़ा हो चला, वह चलने-फिरने और बातचीत करने लगा। एक दिन बादशाह ने प्यार से उसके सिर पर हाथ फेरकर कहा—"बेटा, तू मुझे देखकर क्यों हँसा करता है। मैं तुझे मिठाई दूँगा, सच्ची बात तो बता दे बेटा?" लड़का चुप होकर रह गया। लड़के की उमर बढ़ने के साथ साथ बादशाह के आश्चर्य और नाराज़ी की मात्रा भी दिन पर दिन बढ़ने लगी। लड़का १५ वर्ष का हो गया। बादशाह के सामने पहुँचते ही उसके मुख पर मुस्कराहट छा जाती थी। एक दिन

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बादशाह ने कुछ रुष्ट होकर कहा—"मंत्रीपुत्र, तुम सयाने हुए, तुम्हारी यह ढिठाई अब मुझे अच्छी नहीं लगती। तुम मुझे देखकर क्यों हँसा करते हो? आज इसका कारण बताओ। नहीं तो तुम्हें सख़्त सज़ा दी जावेगी।" लड़के ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह उसी तरह मुस्कराता खड़ा रहा। बादशाह ने उसे अपने महल की हवालात में क़ैद कर दिया।

इधर रूम के बादशाह ने सुना कि दिल्ली के बादशाह का मंत्री मर गया है। मंत्री के बिना राजा निर्बल होता है,ऐसा सोच उसने दिल्ली पर चढ़ाई कर देने का मन्सूबा बाँधा। फिर उसने सोचा, चढ़ाई करने के पहले शत्रु के बल-बुद्धि की थाह ले लेना उचित है। वहाँ और कोई बुद्धिमान् पुरुष है या नहीं, इसकी जाँच करने के लिए उसने माँ-बेटी, दो घोड़ी जो रंगरूप और डीलडौल में एकसमान थीं, दूत के ज़रिये दिल्ली के बादशाह के पास भेजीं और चिट्ठी में लिख भेजा—"बताओ इनमें से कौन माँ है और कौन बेटी। अगर न बतला सको तो राज ख़ाली कर दो, वरना हम हमला करेंगे।"

घोड़ियों को देख और चिट्ठी पढ़कर दिल्ली का बादशाह घबड़ा गया। दोनों घोड़ियाँ एक समान दिखाई देती थीं। वह किसे माँ और किसे बेटी कह दे! बादशाह को अपने मंत्री की याद आई। सोचा, इस समय वह ज़िंदा होता तो बात की बात में इस ख़त का जवाब लिख देता। मुझे इसकी ख़बर तक न होती। ऐसी गुत्थियाँ वही तो सुलझाया करता था। अब मैं क्या करूँ?

बादशाह इसी चिंता में बैठा था। भोजन की बेरा टल गई। महल से दासी आई। कह दिया,आज मुझे भूख नहीं लगी। कुछ समय पश्चात् शाहज़ादी ने आकर कहा—"पिता जी, आज भोजन न करोगे? आप चिंतित मालूम पड़ते हैं। क्या बात है?" बादशाह ने रूम के बादशाह का पत्र बतलाकर कहा—"बेटी, कठिन समस्या है, मंत्री बिना इस उलझन को कौन सुलझावे।" बेटी ने कहा—"पहले आप भोजन तो कर लीजिये। फिर सोच समझ कर उत्तर लिख दिया जावेगा।" बादशाह ने कहा—"आज भूख नहीं है, तुम जाओ।" बेटी यह कहती हुई लौटी—"बड़ी आफ़त आई है। मालूम होता है अब यह राज चला जावेगा।" महल की हवालात में मंत्रीपुत्र क़ैद था। उसके कानों में भनक पड़ी। उसने पूछा—"शाहज़ादी, क्या बात है?" बेटी ने सब क़िस्सा कह सुनाया। मंत्रीपुत्र ने कहा—"यह कौन बड़ी बात है, मैं बतला दूँगा, कौन माँ और कौन बेटी है।" शाहज़ादी तुरंत लौट पड़ी और अपने चिन्ताग्रस्त पिता के पास जाकर कहने लगी—"पिताजी, मंत्रीपुत्र कहता है यह कौन बड़ी बात है? मैं बतला दूँगा।" बादशाह ने तुरंत मंत्रीपुत्र को बुलाया। उसने आते ही कहा—"सरकार, आप व्यर्थ चिंता कर रहे हैं यह कोई बड़ी बात नहीं है, पहले आप भोजन

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कर आइये। मैं तुरंत पत्र का उत्तर लिख दूँगा।" लड़के की बात सुनकर बादशाह की चिंता कुछ कम हुई। लड़के को लेकर वह भोजन करने चला गया। भोजन के पश्चात् दोनों दरबार में आये। मंत्रीपुत्र ने एक नाँद में दूध और दूसरी नाँद में दाना फुलोकर रखवा दिया। फिर दूर से दोनों घोड़ी छोड़ी गईं। जो माँ थी वह दाने की नाँद के पास जाकर दाना खाने लगी और जो बेटी थी वह दूध की नाँद के पास जाकर दूध पीने लगी। दोनों घोड़ियों पर चिट लगवाकर मंत्रीपुत्र ने रूम के बादशाह को उत्तर लिख दिया। दूत दोनों घोड़ी और पत्र लेकर वापिस चला गया।

उचित उत्तर पाकर रूम के बादशाह ने सोचा, मंत्री के न रहने पर भी वहाँ अब भी कोई बुद्धिमान् पुरुष अवश्य है। जब तक पूरी जाँच न कर ली जाय, चढ़ाई करना ठीक न होगा। इस बार उसने एक समान दो लकड़ी बनवाईं और पूछा—'बताओ इनमें से कौन जड़ की और कौन पींड़ की है? अगर न बता सको तो राज्य ख़ाली कर दो, नहीं तो हम हमला करेंगे।'

दूत फिर दिल्ली आ पहुँचा। उसने बादशाह के सामने दोनों लकड़ी पेश करके पत्र दिया। बादशाह पत्र पढ़कर फिर चिन्तामग्न हो गया। वह मन ही मन सोचने लगा, एक आफ़त से छूटे नहीं कि दूसरी तैयार! दोनों लकड़ी उलट पलट कर देखीं, दोनों एक समान थीं। उनमें ज़रा भी अन्तर नहीं दिखा। शाहज़ादी फिर बादशाह को भोजन के लिए बुलाने आई। उसने इनकार कर दिया। शाहज़ादी कहती जाती थी—"एक बार तो मंत्री के लड़के ने गुत्थी सुलझा दी थी। अब रूम के बादशाह ने दूसरी गुत्थी पेश कर दी। मंत्री के न रहने से मालूम होता है अब यह राज चला जायगा।" मंत्रीपुत्र ने कहा—"क्या बात है? क्या रूम के बादशाह ने फिर कोई नई पहेली भेजी है?" शाहज़ादी ने कहा—"हाँ भैया, इस बार एक रूप रंग की दो लकड़ी भेजी हैं। पूछता है—बताओ, कौन जड़ की और कौन पींड़ की है?" मंत्रीपुत्र ने कहा—"कोई बड़ी बात नहीं, मैं बतला दूँगा।" बेटी के कहने पर बादशाह ने मंत्रीपुत्र को हवालात से बुलाकर कहा—"लो, यह दूसरी आफ़त आई। इसका जवाब लिखो।" मंत्रीपुत्र ने कहा—"पहले आप भोजन कीजिए, पीछे जवाब लिखा जायगा।" दोनों भोजन करने गये। पान मसाले की उड़ी। फिर मंत्रीपुत्र ने कहा—"दोनों लकड़ी लेकर नदी पर चलिए। बादशाह, सभासद् और मंत्रीपुत्र नदी के किनारे पहुँचे। मंत्रीपुत्र ने दोनों लकड़ी एक साथ ज़ोर से नदी के पानी में डुबो दीं। जो पहले ऊपर आ गई, कहा—इस पर चिट लगाओ 'पींड़ की'; जो कुछ पीछे ऊपर आई, कहा—इस पर चिट लगाओ 'जड़ की'। रूम के बादशाह को उत्तर लिखकर भेज दिया गया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बादशाह ने मंत्रीपुत्र की पीठ ठोककर कहा—'बेटा, तुम अपने पिता के समान बुद्धिमान् हो। आज से तुम मंत्री हुए; पर बेटा यह तो बताओ, तुम मुझे देखकर क्यों हँसा करते थे?" मंत्रीपुत्र मुस्कराता हुआ चुप खड़ा रहा। बादशाह के प्रश्न का कुछ उत्तर नहीं दिया। मंत्रीपुत्र को चुप देखकर बादशाह का क्रोध बढ़ा और उसे फिर हवालात को भेज दिया।

दूसरी बार भी सही उत्तर पाकर रूम के बादशाह ने पहले से कठिन परीक्षा लेने का विचार किया। इस बार उसने एक समान वज़न की दो काठ की पुतलियाँ बनवाईं और दूत द्वारा दिल्ली के बादशाह के पास भेजकर पूछा—"बताओ, इनमें से कौन हल्की और कौन वज़नदार है? अगर न बतला सको, तो राजधानी ख़ाली कर दो, नहीं तो हम चढ़ाई करेंगे।"

दिल्ली का बादशाह फिर परेशानी में पड़ गया। दोनों पुतलियाँ समान वज़न की हैं। फिर यह प्रश्न कैसा? उसने मंत्रीपुत्र को बुलाकर कहा—"बेटा, यह बला फिर आ गई। इसे सुलझाओ। मेरी अक्ल काम नहीं करती। तौलकर देखो न, दोनों समान वज़न की हैं, एक रत्ती कम-बढ़ नहीं हैं, फिर यह कैसा प्रश्न? मंत्रीपुत्र ने दोनों पुतलियों को हाथ में लेकर उन्हें ध्यान से देखा, कुछ सोचकर उसने कुछ कंकड़ लाने को कहा। एक कंकड़ एक पुतली के कान में डाला। वह तुरंत उसके मुँह से निकलकर नीचे ज़मीन पर गिर गया। दूसरा डाला। वह भी गिर गया। फिर दूसरी पुतली के कान में कंकड़ डाला। वह उसके मुँह से न गिरकर उसके पेट में चला गया। इस तरह कई कंकड़ डाले, सभी उसके पेट में चले गये। बाहर एक भी न निकला। मंत्रीपुत्र ने कहा—"यह पुतली वज़नदार है और पहली पुतली हल्की है।" दोनों पर चिटें लगाकर वापिस भेज दी गईं।

बादशाह मंत्रीपुत्र की बुद्धि देखकर चकित हो गया। सोचा इसे अब मंत्री बना देना चाहिए। पूछा—"बेटा, अब तो बताओ, तुम मुझे देखकर क्यों हँसा करते थे।" मंत्रीपुत्र पहले के समान मन्द मन्द मुस्कराता हुआ चुप खड़ा रहा, कुछ उत्तर नहीं दिया। बादशाह ने उसे फिर हवालात भेज दिया।

इधर तीनों प्रश्नों का सही सही उत्तर पाकर रूम के बादशाह को विश्वास हो गया कि दिल्ली में बुद्धिमानों की कमी नहीं है। वहाँ जाकर विजय पाना कठिन है। अब केवल एक बात की जाँच करना और बाक़ी रहा। जिस प्रकार वे घर में रह कर बुद्धि से काम लेते हैं उसी प्रकार क्या वे बाहर जाकर, विदेश में भी अपनी बुद्धि का कुछ कौशल दिखा सकते हैं या नहीं? यदि वे केवल घर के कुशल हैं तो विशेष भय नहीं, दिल्ली पर धावा किया जा सकता है; पर यदि वे घर के समान बाहर भी अपनी बुद्धि का चमत्कार दिखा सकते हैं तो उन्हें छेड़ना ठीक न होगा। क्योंकि छेड़े जाने पर वे हमको यहाँ आकर तंग कर सकते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

यह सोच रूम के बादशाह ने दिल्ली के बादशाह को लिख भेजा—"दिल्ली का कोई चोर अमुक तारीख़ की रात को हमारी राजधानी में आकर चोरी करे। अगर उस रात चोरी न हुई तो मैं दिल्ली पर हमला कर दूँगा।"

इस बार दिल्ली के बादशाह का दिल टूट गया। उसने सोचा, अभी तक तो रूम की पहेलियों का उत्तर किसी तरह लिखाकर यहाँ से भेज दिया करता था, अब ऐसा कौन माई का लाल है जो रूम में जाकर अपना हुनर दिखावे। मुश्किल बात है। फिर उसने मंत्रीपुत्र को बुलाकर सब समाचार कह सुनाया। मंत्रीपुत्र ने कहा—"कौन बड़ी बात है, यदि और कोई न जायगा तो मैं जाकर चोरी कर लाऊँगा। आप क्यों व्यर्थ चिन्ता कर रहे हैं।" बादशाह उसकी बुद्धि का क़ायल था। उसे विश्वास हो गया। उसने कहा—"बेटा, और कोई नहीं, तुम्हीं को जाकर यह काम करना पड़ेगा।" मंत्रीपुत्र ने कहा—"सरकार का हुक्म सिर-आँखों पर है।" बादशाह ने १५ दिन पहले यथोचित रुपया और सामग्री देकर मंत्रीपुत्र को रूम के लिए विदा कर दिया।

मंत्रीपुत्र चलते-चलते कुछ दिनों में रूम की राजधानी में जा पहुँचा। नगर में आज सख़्त पहरा था। मुनादी की गई थी कि आज रात को सब लोग ख़ूब सावधान रहें। यदि आज किसी के घर का एक खपरा भी चोरी गया तो वह तोप के मुहरे पर रखकर उड़वा दिया जायगा। नगर के फाटकों पर फ़ौज का पहरा था।

शहर के बाहर एक बग़ीचा था। मंत्रीपुत्र बग़ीचे के फाटक के भीतर चला गया। एक पेड़ से घोड़े को बाँध, भीतर जाकर उसने मालिन से पीने के लिए पानी माँगा। मालिन ने कहा—"शीघ्र यहाँ से भाग जाओ। आज चोरीवाला दिन है। आज अगर किसी के घर का एक खपरा भी चोरी चला गया तो बादशाह उसे तोप के मुहरे पर रखकर उड़वा देगा।" मंत्रीपुत्र ने एक मुहर निकालकर उसे देते हुए कहा—"इसे लो और रहम करके एक लोटा जल मुझे दो, मैं प्यास से व्याकुल हो रहा हूँ।" मुहर देखते ही मालिन नरम पड़ गई। तुरंत पानी का लोटा भर लाई। मंत्रीपुत्र ने पानी पीकर कहा—"आज रात भर घोड़ा यहाँ बँधा रहने दो और किराये की एक मुहर और ले लो।" ऐसा कहकर उसने एक मुहर और दे दी। मालिन ने घोड़ा छोर कर अपने घर के भीतर बाँध दिया। इधर मंत्रीपुत्र एक पोटरी और दो लकड़ी लेकर बाहर आया। फिर उसने फटे पुराने कपड़े पहिने, काँधे पर पेटी टाँगी, दोनों हाथों में दो लकड़ियाँ ले, लूला बन, दोनों पैरों को धरती पर घसीटता और धूल उड़ाता हुआ, लकड़ियों के सहारे चलने लगा। धीरे-धीरे पैर घसीटता हुआ फाटक पर जा पहुँचा। पहरेवालों ने पूछा—"कौन है ?"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

"सरकार ! इसी शहर का रहनेवाला एक नाई हूँ। देहात में बाल बनाने गया था। लूला हूँ। कुड़रते कुड़रते मुश्किल से आ पाया हूँ। दिन भर का थका-माँदा और भूखा हूँ। घर जाने दीजिए सरकार, नहीं तो भूखों मर जाऊँगा।"

एक सिपाही—"नहीं, आज रात को किसी को अंदर जाने की इजाज़त नहीं है।"

दूसरा सिपाही—"अजी जाने भी दो। बेचारा लूला है। तुम क्या इसे ही दिल्ली का चोर समझते हो ? गरीबों को सताना अच्छा नहीं।"

आख़िर नाई को अन्दर जाने की इजाज़त मिल गई। वह धीरे-धीरे राजमहल के फाटक के पास एक वृक्ष के नीचे जाकर सो रहा। बीच-बीच में सिपाही आकर पूछते—"कौन सोता है ?" उत्तर मिलता—"सरकार, एक लूला नाई हूँ !"

बादशाह का नाई हर रोज़ रात को बादशाह के पैर मला करता था। आधी रात के समय बादशाह सो गए। इधर नाई को ख़्याल आया, ऐसा न हो कि दिल्ली का चोर मेरे ही घर की चोरी कर ले जाय। एक बार घर जाकर देख आऊँ और नाइन को जागते रहने की ताक़ीद कर आऊँ। नाई महल के बाहर आया। देखा, एक पेड़ के नीचे कोई सो रहा है। पूछा—"कौन है ?" उत्तर मिला—"एक नाई हूँ।" नाई ने कहा—"मैं थोड़े समय के लिए घर जाता हूँ। तब तक तुम मेरे बदले बादशाह के पैर मलो।" उत्तर मिला—"सरकार के काम को कौन इन्कार है। पर मैं लूला हूँ। मुझे वहाँ तक पहुँचा दो।" नाई उसको उठाकर ले गया और बादशाह के पलँग के एक कोने पर बिठा दिया। नाई चला आया। जब उसने देखा नाई बाहर निकल गया तो जेब से कैंची निकाली और बादशाह की एक तरफ़ की मूछ काटकर एक डिब्बी में बंद करके रख ली। बादशाह का मुँह ढाँककर धीरे-धीरे पैर मलने लगा। कुछ समय बाद नाई आया और उसे उठाकर बाहर उसी वृक्ष के नीचे रख गया। नाई के जाते ही मंत्रीपुत्र उठा और शहर के दूसरे फाटक पर उसी लूले के वेश में जा पहुँचा।

इस समय रात के ४ बज चुके थे। पहरेवालों ने रोका—रात में बाहर जाने की मनाही है। लूले ने दीनता से कहा—"सरकार ! मैं लूला लँगड़ा नाई हूँ। शहर में मुझसे कोई हजामत नहीं बनवाता। रोज़ देहात में जाकर किसानों के बाल बना पेट पालता हूँ। मेरी हालत पर ग़ौर करके मुझे जाने की इजाज़त दी जावे।

हवालदार ने कहा—"निकल जा।" लूला दोनों लाठियों के सहारे पैर घसीटता हुआ धीरे-धीरे फाटक से निकलने लगा। कुछ दूर तक वह इसी चाल से चलता रहा। जब पहरेवालों की नज़र से ओझल हो गया तो दोनों लाठियाँ फेंककर झट बग़ीचे में आया। अपनी पोशाक पहनी। दो मुहरें निकालकर मालिन को इनाम दीं और घोड़े पर सवार होकर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हवा से बातें करने लगा। कुछ दिन पीछे दिल्ली आकर बादशाह को सब समाचार सुनाकर डब्बी में रखी हुई मूँछ बतलाई। बादशाह बहुत ख़ुश हुआ।

उधर सुबह रूम में घर-घर जाँच पड़ताल शुरू हुई। किसी की कोई वस्तु चोरी तो नहीं गई? सारा शहर छान डाला। मालूम हुआ कि किसी की कोई वस्तु चोरी नहीं गई। इतने में मंत्रियों ने देखा—बादशाह की मूँछ नदारत है!! पर किसी को कहने का साहस न हुआ। उन्होंने कहा—"सरकार, शहर में तो किसी की चोरी नहीं हुई, महल भी देख लेना चाहिए। ऐसा न हो कि महल की ही कोई वस्तु चोरी गई हो।" महल देखा गया। सब चीज़ें मौजूद थीं। एक चतुर मंत्री ने कहा—"शीशमहल भी तो देख लीजिए।" उसने सोचा शीशमहल में चारों ओर शीशा ही शीशा लगे हैं। उसमें जाते ही बादशाह को अपनी सूरत दिख जायगी और चोरी का पता चल जायगा। शीशमहल में जाते ही बादशाह ने देखा मूँछ नदारत है! वह कह उठा—"दिल्ली का चोर ग़ज़ब का है। वह मेरी मूँछ ले गया!" बादशाह ने उसी समय दिल्ली के बादशाह को एक पत्र लिखा—"मैं दिल्ली के चोर की निपुणता पर ख़ुश हूँ। वह चतुर चोर अवश्य ही बड़ा बुद्धिमान् और कोई बड़ा आदमी होगा। उसके साथ में अपनी बेटी का ब्याह कर देना चाहता हूँ। आप उसे दूल्हा बना बरात लेकर शीघ्र आवें।" मंत्रीपुत्र का ब्याह रूम की शाहज़ादी के साथ हो गया। बादशाहने राजपाट सब उसी के सुपुर्द कर दिया।

दिल्ली का बादशाह जब लौटकर घर आया तब उसे अपनी भूल मालूम हुई। उसने सोचा कि अब अपने राज्य में कोई बुद्धिमान् मनुष्य नहीं रहा। अब रूम का बादशाह मेरा राज्य अवश्य ले लेगा। उसने बेगम से सलाह करके अपनी बेटी का विवाह भी मंत्रीपुत्र के साथ कर दिया। मंत्रीपुत्र रूम की शाहज़ादी को लेकर दिल्ली आ गया और विवाह के बाद एक जुदे महल में रहने लगा।

एक दिन मंत्रीपुत्र के सिर में दर्द उठा। मन्त्रीपुत्र पलँग पर लेटा था, रूम की शाहज़ादी उसका सिर दबा रही थी और दिल्ली की शाहज़ादी पैर। दामाद के सिरदर्द की बात सुनकर बादशाह भी वहाँ गया और एक कुर्सी पर बैठ दामाद से तबियत का हाल पूछने लगा। मन्त्रीपुत्र ने कहा—"सिरदर्द तो केवल एक बहाना है। आप मेरे ससुर होने से पिता-तुल्य हैं, आज आपको जन्म समय के हँसने का कारण बतलाना चाहता हूँ। आशा है आप मेरी गुस्ताख़ी माफ़ करेंगे। देखिए, रूम की शाहज़ादी तो इस समय मेरा सिर दबा रही है और आपकी शाहज़ादी पैर। यह बात यदि मैं उस दिन कहता तो आप अवश्य ही उसी दिन मुझे मरवा डालते।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जाल-कौमुदी

श्रीकृष्णानंद गुप्त

आज से कई वर्ष पहले की बात है। भारतीय चित्रकला के मर्मज्ञ और इस विषय के सुप्रसिद्ध लेखक श्री एन० सी० मेहता आई० सी० एस० (रिटायर्ड) के पुस्तकालय में मुझे 'जाल-कौमुदी' नामक एक पुस्तक देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। उसके टाइटिल पेज पर छपा था।

जाल-कौमुदी

"जिसमें जालियों के अनेक प्रकार के चित्र व उनके बनाने की सुगम रीति का वर्णन है, और जिसको भारतवर्षीय अनेक प्रकार के शिल्पकार तथा सर्वसाधारण चित्र-विद्या के प्रेमियों के लाभार्थ पंडित कुन्दनलाल हेडक्लर्क कलक्टरी फ़रुखाबाद और सम्पादक 'कवि व चित्रकार' ने निर्माण किया।

स्थान फतेहगढ़

जगतप्रकाश यंत्रालय में पं० जगन्नाथप्रसाद त्रिपाठी के प्रबंध से मुद्रित हुआ। पहली बार ७०० जिल्द। मूल्य डाक व्यय सहित ॥–)"

जैसा कि ऊपर के विवरण से प्रकट है, पुस्तक गृह-निर्माण कला के एक महत्त्वपूर्ण अंग से संबंध रखती थी। उसमें जालियों के विशद विवेचन के अतिरिक्त उनके २६४ नमूने भी दिये थे। सब एक से एक बढ़कर विचित्र। उनसे लेखक की कला-मर्मज्ञता और परिष्कृत रुचि का पता चलता था। रेखागणित का अच्छा ज्ञान हुए बिना इस प्रकार की विविध जालियों की कल्पना करना मुझे कठिन मालूम हुआ। पुस्तक का विषय तो अत्यन्त रोचक था ही साथ ही यह देखकर तो और भी आश्चर्य हुआ कि आज से लगभग ५५ वर्ष पूर्व—पुस्तक सन् १८९२ की छपी थी—हिन्दी शिल्पकला के एक ऐसे विषय पर पुस्तक लिखी गई जिसके प्रति शिक्षित समुदाय की आज भी कोई रुचि नहीं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पुस्तक के लेखक पं० कुन्दनलालजी का नाम मैं पहली बार ही पढ़ रहा था। वे 'कवि व चित्रकार' नामक साहित्य और कला-संबंधी एक पत्र का प्रकाशन और संपादन करते थे, और अवश्य ही एक कला-प्रेमी और सहृदय लेखक रहे होंगे। हिन्दी के किसी इतिहास में इस तथ्य का उल्लेख हुआ है या नहीं, मैं कह नहीं सकता। हाँ, अभी कुछ दिन हुए तब पं० हरिशंकरजी शर्मा ने उनके इस पत्र के विषय में 'विशाल-भारत' में एक छोटा-सा लेख अवश्य लिखा था। मुझे स्मरण नहीं कि उसमें 'जाल-कौमुदी' की चर्चा थी या नहीं।

पुस्तक को महत्त्वपूर्ण जानकर उसकी कुछ आवश्यक बातों को मैंने उसी समय नोट कर लिया था, साथ ही एक झिल्ली क़ाग़ज़ पर अधिकांश जालियों के नमूने भी उतार लिये थे। लापरवाही से वे तो कहीं खो गये, पर उस दिन अपने पुराने काग़ज़ों की छान-बीन करते समय वे नोट मिल गये। उनके आधार पर 'लोकवार्त्ता' के पाठकों को इस पुस्तक का कुछ विशेष परिचय दिया जा रहा है।

पुस्तक की विषय-सूची के अनुसार उसमें निम्नलिखित विषय थे :—

विषय	पृष्ठ
(१) समर्पण पत्र	
(२) भूमिका	१
(३) जालियों की उत्पत्ति	८
(४) जालियों के लाभ	१४
(५) जालियाँ बनाने की रीति	१९
(६) गुरु	३०
(७) कवि व चित्रकार	४०
(८) जालियों के नमूने	१—८८
(९) समस्या-पूर्त्ति	१—३०

समर्पण-पत्र के फट जाने से इस बात का पता नहीं लग सका कि पुस्तक किसको समर्पित की गई थी। भूमिका पढ़ने योग्य थी। जालियों की उत्पत्ति का विवेचन करते हुए उसमें लिखा गया :—

"हम निश्चय नहीं जानते कि जालियों की उत्पत्ति किस प्रकार से हुई और किसने की। क्योंकि संभव है कि जैसे मनुष्य जब तक घर, मंदिर इत्यादि नहीं बनाना जानता था पेड़ों के नीचे रहा करता था। और फिर हौले-हौले छप्पर, झोपड़े

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इत्यादि बनाने लगा, जिनमें पेड़ की बीड़ का काम उसने बाँस अथवा गुद्दों से निकाला और उस बाँस की टेवकी के स्थान में अब कैसे-कैसे सुन्दर नाना प्रकार के पत्थर और धातु के खंभ बनने लगे हैं, उसी प्रकार मनुष्य ने पवन और उजाले के लिए टट्टियों में छेद रक्खे हों, जिनके स्थान में अब जालियाँ बनने लगी हैं— हमको न तो इतना सावकाश है कि हम इस विषय में पूरी-पूरी भाँति से जैसी कि होनी चाहिये खोज करें, क्योंकि हम पराधीन हैं और—

'पराधीन स्वपनेहुँ सुख नाहीं।'

परंतु पं० कुन्दनलालजी ने इस विषय में इतना ही लिखकर संतोष नहीं कर लिया। उन्होंने भारतवर्ष के विद्वानों की सम्मति लेने के लिए "किस कारण कौन निकाली है जाली।" यह समस्या बनाकर और उसकी ५००० प्रतियाँ छपवाकर भारतवर्ष के कुछ प्रान्तों में विद्वज्जनों की सेवा में भेजी, जैसा कि आगे उन्होंने भूमिका में लिखा। इस विज्ञापन की एक प्रति भी उन्होंने पुस्तक के अंत में दे दी। स्वयं उनके शब्दों में उससे 'जालियों की उत्पत्ति जानने की उत्कंठा' उनकी प्रकट होती है। परन्तु संतोष-जनक समस्या-पूर्त्तियाँ बहुत कम हुईं और भूमिका में उन्हें बड़े आश्चर्य के साथ यह लिखना पड़ा 'कि विज्ञापन में स्पष्ट रीति से लिखे जाने पर भी शृङ्गार रस में आसक्त हमारे कवि-समुदाय ने शृङ्गार रस ही में उसकी पूर्ति कर मेरे पास भेजी कि जिससे मेरा मनोरथ सफल न हुआ।'

निस्संदेह पं० कुन्दनलाल जी अपने समय के अनेक हिन्दी-कवियों और लेखकों से बहुत आगे बढ़े हुए थे। देश की पराधीनता का काँटा उनको कसकता है और निरे शृङ्गार-रस के प्रेमियों की वे आलोचना करते हैं।

जाली की किस लकीर का देखनेवाले के चित्र पर क्या प्रभाव पड़ता है पंडितजी का इस विषय का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण अवश्य ही सबको मान्य होना चाहिए। उन्होंने लिखा—

"यह विद्या गूढ़ है। इसको यथावत प्राप्त करने के निमित्त एक काल चाहिए। परन्तु हम विद्यार्थी को कुछ इस विषय का भी बोध कराने के लिए संक्षेप रूप से उसके मुख्य-मुख्य गुण यहाँ लिखते हैं जिससे जाली बनाने वाले को ज्ञान हो जावे कि कौन भाँति की जाली किस स्थान में बनानी या लगानी चाहिए।

सीधी खड़ी लकीरों के देखने से चित्र पर गंभीरता, संभ्रम इत्यादि, सीधी आड़ी लकीरों के अवलोकन करने से शान्ति, आलस्य, लपक झपक की मरोड़ीदार

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लकीरों के दृष्टिगोचर होने से प्रफुल्लता, उल्लास और गोल दौड़ती हुई लकीरों से चंचलता इत्यादि उत्पन्न होती है। यदि यह सत्य है तो प्रत्यक्ष है कि विश्राम करने के स्थान में जाल जाली बनाने चाहिए कि जिनमें सीधी, आड़ी लकीरें अधिकतर हों। भजन, पूजन अथवा लिखने-पढ़ने और काम करने के स्थल में ऐसे जिनमें सीधी खड़ी लकीरें विशेष हों। मिलने मिलाने, खेलने के वा ऐसे स्थानों में जो हाट मार्ग इत्यादि से दृष्टि पड़ें ऐसे जिनमें लकीरों की दौड़ झपट लौट-पौट, हाव उछाल बहुत हो कि जिनको देखकर हर मनुष्य का चित्त प्रसन्न और प्रफुल्लित हो जावे। इस प्रसंग का बहुत विस्तार है । परन्तु जाली बनानेवालों के लिये जो कुछ ऊपर लिखा गया है, बहुत है।"

आगे चलकर भूमिका में पंडितजी ने इस बात पर खेद प्रकट किया कि 'हम कला की सुन्दरता और गुणों को नहीं समझते। विलायती वस्तुओं की चमक-दमक देखकर मुग्ध हो जाते हैं।' अपने देश की कलाओं का आदर करना हमने छोड़ दिया है। इस कुदशा के जो कारण उन्होंने बताये वे आज भी हमारे लिए विचारणीय हैं। उनको हम यहाँ ज्यों का त्यों उद्धृत करते हैं—

"(१) राज्य का देशी शिल्प-विद्या की ओर ध्यान न होना।

(२) हिन्दुस्तानी लोगों का शिल्पी पदार्थों की भलाई बुराई में यथोचित विवेचन करना।

(३) (क) शिल्पकारों का वर्त्तमान काल के लौकिक व्यवहार और रुचि को न विचारना।

(ख) अपनी विद्या और वस्तुओं को प्रसिद्ध करने का यत्न न जानना।

(४) शिल्प-विद्या के विषय की पुस्तकों का न होना।

(५) सर्वोपरि विलायती वस्तुओं का सस्तमोली होना।"

पंडितजी सरकारी नौकर थे। परन्तु भारतीय कलाओं के ह्रास के जो कारण उन्होंने ऊपर दरसाये हैं उनसे वे स्वाधीन विचारों के, एक स्पष्टवादी, और विचारशील लेखक प्रकट होते हैं।

भूमिका के अंत में उन्होंने जो शब्द लिखे वे उनकी विनम्रता और दृढ़ आत्मविश्वास के परिचायक हैं। लिखते हैं कि—

"मेरी सर्वविद्वान् और शिल्प-हितैषी पुरुषों से सविनय प्रार्थना है कि जो-जो बातें उक्त महाशय मुझको ऐसी लिखकर भेजेंगे कि जिससे यह ग्रंथ अधिक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उपयोगी हो जावे मैं उनको बहुत धन्यवाद सहित स्वीकार करूँगा और जो इस ग्रंथ पर केवल द्वेषारोपण करना चाहें उनसे मैं अति नम्रता से पहले से ही निवेदन कर देता हूँ कि आप लोग वृथा परिश्रम न करें। मैं आप ही इस ग्रंथ को देखकर लज्जित होता हूँ कि इसमें कितनी त्रुटियाँ रह गई हैं। आप अपने विष में बुझे हुए बाणों को न छोड़ें।"

अब वह विज्ञापन देखिए जो कि उन्होंने 'जालियों की उत्पत्ति किस प्रकार हुई' यह जानने के लिए पुस्तक के अंत में छापा, और जिसकी अलग से ५००० प्रतियाँ छपवाकर भारत के कुछ प्रान्तों में उन्होंने बँटवाई।

'विज्ञापन पत्र'

विदित हो कि जो कवि-जन निम्नलिखित समस्या की पूर्ति करेंगे उनके परिश्रम की नौछावर में सबसे उत्तम सवैया के लिए एक दुशाला, दूसरे को एक घड़ी, और तीसरे को पगड़ी भेंट की जायगी। सवैया सरल भाषा में होना चाहिए और यकुम फ़रवरी सन् १८९१ ईस्वी अर्थात् माघ बदी ७ दिन रविवार सं० १९४७ तक नीचे लिखे पते से भेजा जावे। ५ ता० को सब चिट्ठियाँ खोलकर एक कमेटी के सामने जिसमें कई विद्वान् लोग होंगे, देखी जावेगी और जिसके सवैये को कमेटी अच्छा समझेगी उसकी सेवा में ऊपर लिखी हुई वस्तुएँ भेजी जायेंगी, और उन कवियों के नाम 'हिन्दुस्थान' नामी समाचार पत्र में मुद्रित कराये जायेंगे।

समस्या—"किम कारण कौन निकाली है जाली।"

कमेटी के सभापति राजा लक्ष्मणसिंह थे। ७ कवियों को पुरस्कार दिया गया। किसी को दुशाला, किसी को पगड़ी, किसी को घड़ी; जैसी जिसकी रचना थी।

समस्या-पूर्त्ति करके भेजनेवालों में स्वर्गीय पं० नाथूरामजी 'शंकर' शर्मा तथा पं० महावीरप्रसादजी द्विवेदी के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। पाठकों के कुतूहल के लिए हम यहाँ इनकी समस्या-पूर्त्तियाँ उद्धृत करते हैं। पहले स्व० शंकरजी की समस्या-पूर्ति लीजिए—

(१)

"शंकर लोक विलोक गुली मन रोक रहैं कब ठाली।
देख अनेक जुदी छवि छेक यथोचित एक नई गढ़ डाली॥
यों उपचार नवीन विचार प्रवीण प्रचार करें परपाली।
भौतिक दृश्य प्रमाण बिना किम कारण कौन निकाली है जाली॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(२)

चाप चतुर्भुज वृत्त त्रिकोणज बंक विलच्छन जाल प्रनाली।
नागफणी अठमास छमास छला बँद मच्छ पिठी छुरियाली॥
अंकित फूलकली दल बेल अनेक पै एक ते एक निराली।
शंकर सो सब साँच कहो किम कारण कौन निकाली है जाली॥"

समस्या-पूर्त्ति के लिए जब उनको पुरस्कार में पगड़ी भेंट की गई तो उत्तर में उन्होंने लिख भेजा—

"ग्राहक अर्थ अनेकन की तुक पण्डित कुन्दनलाल पठाई।
ता पद पै अपनी अपनी रच लोगन भेंट करी कविताई॥
पास भये कवि सात समाज में पाय यथोचित मान बड़ाई।
श्रीयुत सूर सभापति ने द्विज शंकर के शिर पाग बँधाई॥"

स्वर्गीय द्विवेदीजी उन दिनों झाँसी में थे। वहाँ से उन्होंने समस्या-पूर्त्ति-स्वरूप जो सवैया लिख भेजे वे इस प्रकार हैं :—

(१)

"सुपटा शुचि अभ्रचटा अति सौम्य अटा चढ़ि बाल विलोचन शाली।
बरवा बिच कानन कुंडल पंकज मालन धारि लये निज आली॥
इनके अवलोकन को सब कोद प्रमोद के हेतु पयोद प्रनाली।
विरची बुधिवंत अनन्त गुणागर शिल्प उजागर ने जग जाली॥

(२)

कमनीय कठोर कुचस्थलिनी नलिनी दल लोचनि सुभ्र सुचाली।
रजनी मुख हर्म्य चढ़े सजनी बजनी पग नूपुर एकु न चाली॥
लखि प्रताप ऐन कहैं निज सैन ते मैन भरी करि दीठि निराली।
यह युक्ति निकारन कारन हैं सिरजी जग माँहि हजारन जाली॥

(३)

मलियागिरि में गिरि मारुत मारुत मंडल त्याग कला इक छाली।
रस लीन अनेक कलीनन को विरली विरली करिकैं प्रतिपाली॥
उठि गात में होत प्रभात लगैं पृथके पृथकानिल फूलन वाली।
उपजाई अटा में छटान सो हैं यहि कारण जीवन के हित जाली॥"

हम स्व० द्विवेदीजी महाराज के इन सवैयों का, विशेषकर अंतिम सवैये का

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अर्थ बिलकुल नहीं समझे। अपनी इस असमर्थता को स्वीकार करने में हमें कोई संकोच नहीं। वे सचमुच बड़े विलक्षण हैं। पर कई दृष्टियों से हमारे लिए महत्त्व-पूर्ण और शिक्षाप्रद भी हैं। हिन्दी साहित्य के विद्यार्थियों के लिए उनका ऐति-हासिक मूल्य तो है ही। साथ ही वे इस बात का भी एक उत्तम प्रमाण हैं कि मनुष्य प्रतिक्षण बदलता रहता है। वह जैसा आज है वैसा कल नहीं रहता। इस-लिए उसको सदैव एक ही पैमाने से नापना अथवा उसके किसी एक वर्त्तमान कार्य या रचना से उसके पूरे भविष्य की कल्पना कर लेना, और यह सोच लेना कि उसे जो कुछ बनना था सो बन चुका, एक बड़ी मूर्खता है।

परन्तु 'जाल-कौमुदी' को लीजिये। यह वास्तव में दुःख का विषय है कि 'कवि व चित्रकार' नामक पत्र के संपादक एवं 'जाल-कौमुदी' जैसे महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ के रचयिता पं० कुन्दनलालजी से हिन्दी जगत् भली भाँति परिचित न हो, और उनके विषय में अब तक कुछ भी न लिखा गया हो। हिन्दी-साहित्य के इतिहास-ग्रन्थों में पंडितजी को एक उचित और सम्मानजनक स्थान देकर हमें अपनी इस भूल का प्रायश्चित्त करना चाहिए और साथ ही स्मृति रक्षा के लिए 'जाल-कौमुदी' के एक नवीन और सुन्दर संस्करण के प्रकाशन की चेष्टा भी होनी चाहिए। इतना ही यदि हम कर सके, तो बहुत किया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

महामहिम लोकजीवन

श्रीवासुदेवशरण अग्रवाल एम० ए०, पी-एच० डी०

हमारा लोकजीवन बहुत विशाल और गहरा है। भारतीय इतिहास का कोई युग ऐसा नहीं जिसके पुरातत्त्व की सामग्री शब्दों के रूप में लोक के जीवन में कहीं न कहीं छिपी न पड़ी हो। किसी परत में वैदिक युग के शब्द घर किए बैठे हैं, कहीं श्रौत सूत्रों की शब्दावली आयुष्मती बनकर सुरक्षित है, कहीं गुप्त युग की परम्पराएँ पहचान में आती हैं और कहीं मध्य काल की धारा का स्पष्ट दर्शन मिलता है। ऐसे गूढ़ महामहिम लोकजीवन के पुष्कल अध्ययन की चारों ओर आवश्यकता है। किसी प्रलयुग के पथराए हुए अवशेष चट्टानों की परतदार तहों में युगों तक छिपे पड़े रहते हैं, पर कुशल वैज्ञानिक के हाथ में आते ही वे अपनी जीवनगाथा कह सुनाते हैं। प्रस्तरों की निज वार्ता जिस बारहखड़ी में लिखी हुई है उसका मर्म वैज्ञानिकों को विदित है। अतएव उस लिपि के चमत्कार से वह सबको परिचित करा देता है। नृतत्त्व का शास्त्रीय विवेचन भी कुछ इसी ढंग का है। यों तो लोकवार्त्ता का अस्तित्त्व द्युलोक में फैले हुए सूर्य-प्रकाश की तरह सर्वत्र विद्यमान है परन्तु भाषाशास्त्र में प्रवीण वैज्ञानिक अपने हृदय की सहानुभूति से उस ज्ञान का उपयोग छिपे हुए रहस्यों के उद्घाटन के लिए कर सकता है।

ब्राह्मण ग्रन्थों में कहा है—जितनी बड़ी पृथिवी है उतनी ही बड़ी वेदि है। इस परिभाषा का अर्थ यह है कि जितना भी विश्व का विस्तार है, उसका कोई अंश ऐसा नहीं है जो मनुष्य के लिए काम का न हो अर्थात् जो मानवी यज्ञ की परिधि से बाहर हो। जो यज्ञ की वेदि में आ जाता है; वही यज्ञीय या मेध्य होता है, वही मनुष्य के केन्द्र के अन्तर्गत आ जाता है। जो मानवी वेदि से बाहर है, मनुष्य के लिए उसका कुछ उपयोग नहीं है। संसार में अनंत सुख, अनंत ज्ञान, अनंत धन, और अनन्त बल है, परन्तु एक व्यक्ति, एक कुटुम्ब, या एक राष्ट्र के काम का वही है, जो उसके यज्ञ की वेदि के अन्तर्गत आकर उसके लिए यज्ञीय या मेध्य बनाया

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जा सके। जो कुछ वेदि के खम्भे से नहीं बाँधा जा सका वह अमेध्य होता है। हम एक जीवन में जो यज्ञ का खम्भा खड़ा करते हैं जो कुछ उस खम्भे से नहीं बाँधा गया वह उस जीवन के लिए उपयोगी नहीं बन पाता। यज्ञ से जो बहिर्भूत है उसे यज्ञ के अन्तर्गत लाने का प्रयत्न जन्म जन्मान्तर में चलता रहता है। लोक जीवन के अपरिमित विस्तार को हमारा वारम्वार प्रणाम है। इसके विश्वतोमुखी विस्तार का प्रत्येक अंग मानव के लिए रुचि से परिपूर्ण होना चाहिए। जितना लोक जीवन है उतना ही विशाल तो मानव है। मानव से बाहर लोक में कुछ शेष नहीं रहता। अथवा जैसा वेदव्यास ने महाभारत में बड़े उदात्त शब्दों में कहा है—

गुह्यं ब्रह्म तदिदं ब्रवीमि, न हि मानुषाच्छ्रेष्ठतरं हि किंचित्।

अर्थात् रहस्य ज्ञान की यह एक कुंजी तुम्हें बताता हूँ कि इस लोक में मनुष्य से बढ़कर और कुछ भी नहीं है। इस सूत्र में लोकजीवन और सभी तरह के ज्ञान का मूल्य आँक दिया गया है। मनुष्य से सब नीचे हैं, मनुष्य सबसे बढ़कर है। जो ज्ञान मनुष्य के लिए उपयोगी नहीं वह दो कौड़ी का है। लोकवार्त्ता शास्त्र भी यदि वैज्ञानिक के शुष्क कुतूहल के लिए हो तो वह जीवन के लिए अनुपयोगी हो रहता है। मानव के प्रति सहानुभूति और मानव के कल्याण की भावना लोकवार्त्ता शास्त्र को सरसता प्रदान करती है। लोकवार्त्ता-शास्त्र की प्रतिष्ठा अन्ततोगत्वा मानव जीवन के प्रति नई प्रतिष्ठा के भाव की स्वीकृति है। भारत-जैसे देश में जहाँ लोक-जीवन बहुत ही शान्तिपूर्ण सहयोग और निर्विरोध आदान-प्रदान के द्वारा फूला फला है, लोकवार्त्ता शास्त्र का बड़ा विस्तृत क्षेत्र है। कौन-सा विश्वास कहाँ से उत्पन्न हुआ, बीज रूप से जन्म लेकर मस्तिष्क और मन का कौन-सा भाव वटवृक्ष की तरह चारों खूँटों की भूमि को दबा बैठा है, विकास परम्परा में कौन कहाँ से कहाँ पहुँच गया है, इन सबका विश्लेषण बहुत ही महत्त्वपूर्ण होगा। क्योंकि वह अनेक प्रकार से एक ही प्रधान तत्त्व की विजय को सूचित करता है, और वह महान् धार्मिक और दार्शनिक तत्त्व मनुष्य का मनुष्य के लिए सहिष्णुता का भाव है। वनों के निषाद और शबरों के प्रति भी हिन्दू धर्म ने सदा सहिष्णुता की आरती सजाई है। इसके फलस्वरूप हिन्दूकरण की अमरबेल देशव्यापी संस्कृतीकरण की प्रक्रिया के रूप में फैलती रही। हिन्दूकरण की इस विलक्षण पद्धति को अंग्रेजी में ऐकल्चुरेशन (Acculturation) कहेंगे। यह पद्धति मात्स्य न्याय से ऊपर है। निर्बलों को चट करके बलवान् की सत्ता हिन्दूकरण की सांस्कृतिक प्रक्रिया नहीं है। चतुर्दिक्

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जीवन के साथ सहानुभूति और सहिष्णुता का भाव इसकी विशेषता रही है। आज का हिन्दू धर्म भारतवर्ष के महाकान्तार दंडकारण्य की तरह ही विशाल और गम्भीर है जिसमें अपरिमित जीवन के प्रतीक एक दूसरे के साथ गुथ कर किलोल करते रहे हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चिट्ठी-पत्री, सूचनाएँ और जिज्ञासा

वैश्य जाति में दसा और बीसा

लोकवार्त्ता के प्रथम वर्ष के तृतीयांक में अग्रवाल जाति के 'दसा' और 'बीसा' भेद के विषय में पढ़कर मुझे कुछ आश्चर्य हुआ। मैं समझता था कि यह भेद सिर्फ़ ओसवाल वैश्यों में ही है। पर लेख पढ़ कर यह अनुमान होता है कि यह भेद समस्त वैश्यजाति में घर किए हुए है और उसके दो टुकड़े करने में एक प्रधान कारण भी शायद हुआ है।

समस्त वैश्य जाति में इस दसे और बीसे भेद की उत्पत्ति कैसे हुई, यह तो मुझे मालूम नहीं। परन्तु ओसवालों में इस भेद की उत्पत्ति की जो किम्वदन्ती प्रचलित है, वह मैं पत्रिका के पाठकों और लेखकों को इसलिए सुना देना चाहता हूँ कि अन्य जातियों में प्रचलित इसकी दन्तकथाओं की खोज में वह उनकी सहायक हो।

एक बात और। दसे और बीसे अंगों में किसी भी जाति में बेटी-व्यवहार नहीं होता। परन्तु कहीं उनमें रोटी का व्यवहार भी नहीं है, यह एक आश्चर्य-जनक बात है। कहीं कहीं तो उनके साथ अस्पृश्यों तक सा व्यवहार किया जाता है, जबकि अन्यत्र उनके साथ एक थाली में भोजन करने में भी आपत्ति नहीं समझी जाती।

सच बात तो कोई नहीं जानता, परन्तु साधारणतः यह किम्वदन्ती है कि किसी विधवा की सन्तति को दसा कह दिया गया। जिन्होंने उनसे अपना व्यवहार रक्खा वे सब दसा मान लिए गए और उनके साथ बेटी-व्यवहार बन्द हो गया।

'महाजनवंश मुक्तावली' ग्रन्थ पृ० १६४ में यह कथा लिखी है कि गोंढ़वाड़ देश के पद्मावती नगर में सेठ वस्तुपाल तेजपाल ने सब दयाधर्मी वणिक् जातियों को भोजन के लिए निमंत्रित किया। जब वे सब लोग भोजन कर रहे थे तो एक पोरवाल जाति की विधवा ने वहाँ पहुँचकर सबको सम्बोधित करते हुए यह सूचित किया कि जिसके यहाँ निमंत्रित होकर वे भोजन कर रहे हैं वे तो एक विधवा के पुत्र हैं। यही नहीं, वह विधवा भी इतर वैश्य जाति की थी। यह बात सुनकर और तहक़ीक़ात करने पर उसे सत्य पा निमंत्रित लोगों में बड़ी हलचल मच गई। जो लोग भोजन कर चुके थे वे 'दसे' कह दिए गए और शेष ने अपने आपको उनसे पृथक् बताने के लिए अपने को 'बीसा' कहना शुरू किया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इन निमंत्रितों में सब ही जाति के लोग थे। यह एक धार्मिक भोज था जिसमें उस धर्म के माननेवाले सब ही जाति के लोग सम्मिलित होना अपना परम कर्तव्य मानते थे और इसीलिए उसमें सम्मिलित भी हुए थे। यही कारण है कि 'दसा' और 'बीसा' भेद प्रायः सारी ही वैश्य जातियों में पाया जाता है।

वस्तुपाल तेजपाल नाम के दो भाई गुजरात के बड़े प्रसिद्ध व्यक्ति हो गए हैं। 'प्रबन्ध-चिन्तामणि' ग्रन्थ में उसके लेखक आचार्य ने इनके जन्म के विषय में यह आख्यान लिखा है कि एक बार पत्तन में भट्टारक श्री हरिभद्र सूरि का व्याख्यान हो रहा था। वहीं पर मन्त्री आशराज बैठा हुआ था। उस समय कुमारदेवी नाम की एक अतीव सुन्दरी बाल विधवा स्त्री वहाँ पर आई, जिसे वे आचार्य बारंबार देखने लगे। इससे आशराज का चित्त उस पर आकर्षित हुआ। व्याख्यान के विसर्जन होने के अनन्तर मन्त्री की प्रार्थना पर गुरु ने इष्ट देवता के आदेश से कहा—इसके गर्भ से सूर्य और चन्द्रमा के भावी अवतार की बात देखता हूँ, इसलिए इसके सामुद्रिक को बार बार देख रहा था। गुरु से इस तत्त्व को जानकर मन्त्री ने उसका अपहरण करके उसे अपनी प्रेयसी बनाया। कालान्तर में उसके गर्भ से ज्योतिषेन्द्र (सूर्य और चन्द्र जैसे) वस्तुपाल और तेजपाल उत्पन्न हुए।

'प्रबन्ध-चिन्तामणि' एक मान्य ऐतिहासिक ग्रन्थ है। मध्ययुगीन और ख़ास करके गुजरात के चावड़ा और सोलंकियों के समय के इतिहास की गुत्थियाँ सुलझाने में बड़ा सहायक सिद्ध हुआ है। वस्तुपाल तेजपाल विधवा-पुत्र थे, इसका यह एक ज़बरदस्त प्रमाण है। और जब तक इसके विरुद्ध कोई प्रमाण न मिले, इसे मान लेने में कोई भी आपत्ति नहीं है।

विधवा के पुत्र होते हुए भी वस्तुपाल तेजपाल को समाज में और राज में अपनी बुद्धि और कार्य-चातुर्य के कारण पूर्ण सम्मानास्पद स्थान प्राप्त था। इसकी साक्षी इतिहास दे रहा है। धार्मिक संसार में भी वे हर प्रकार से सम्मानित थे और उनकी जन्म कहानी ने उनके इस सम्मान में कहीं भी बाधा नहीं पहुँचाई थी। इतना होते हुए भी एक बुढ़िया विधवा ने उनकी इस सच्ची जन्मकथा को कहकर समस्त वैश्य जाति को सदा के लिए घातक दो-टुकड़ों में कैसे बँटवा दिया, यही आश्चर्य है। यदि इसी घटना के आधार पर समस्त वैश्य जातियों के दसे और बीसे टुकड़े हुए माने जाते हों तो बालू की कच्ची भित्ति पर कट्टर पंथ के इस महल को खड़ा देखकर हमें अपने पूर्वजों की विवेक-बुद्धि पर सन्देह होने लगता है।

पत्रिका के लेखक यदि इस पर कुछ प्रकाश डालें तो सामाजिक इतिहास के शोध में इतिहासज्ञों को उससे सहायता मिलेगी, ऐसा मेरा विश्वास है।

अजमेर
२६-७-४६

—कस्तूरमल बाँठिया

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पोपाबाई

'लोकवार्त्ता' में पोपाबाई विषयक लेख देखकर आनन्द हुआ है। गुजरात में, जो बात श्रीगणपतलाल जोशी ने लिखी है, अधिक प्रचलित है। पोपाबाई के विषय में तीन कहावतें गुजरात में प्रचलित हैं। १—'पारपोपा', २—'साब पोपली बाई' और ३—'पोपा बाई कुं राज्य छे।'

प्रथम कहावत 'पारपोपा' का प्रयोग छोटे बालकों के साथ बातचीत करते समय किया जाता है। घर में खाने के लिए बालक जब चबैना माँगता है और बारम्बार खाने के लिए धाँधल मचाता है, तब माँ थोड़ा सा देकर कहती है 'भाई हवे न था हाँ। पार पोपा थई गयुं।' बालक को बारंबार चबैना और खाना देने से उसकी तबियत ख़राब हो जाती है। इसी से थोड़ा सा चबाना देकर माँ को अपने बालक को समझाना पड़ता है—बेटा अब नहीं है, पार पोपा हो गया। 'पार' का अर्थ होता है 'खलास' और 'पोपा' का अर्थ 'पोपाबाई' कहने का तात्पर्य यह है कि जैसा पोपाबाई का सब खलास हो गया उसी माफ़क अब चबैना खलास हो गया है, कुछ भी शेष नहीं रहा। पारपोपा सुनकर बालक को भी प्रतीत होता है कि अब चबाना नहीं है।

दूसरी कहावत 'साब पोपलीबाई' का प्रयोग प्रायः बहू रानी के सम्बन्ध में किया जाता है। घर में जब लड़का की बहू आती है और गृहकार्य में वह अकुशल मालूम होती है उस वक्त उपहास और कटाक्ष रूप सासु कहती है—'बहू तो साब पोपली बाई छे।' यहाँ पोपाबाई का पोपली बाई हो गया है। सासु कहती है, जैसे पोपाबाई सुव्यवस्था नहीं रख सकी, बराबर उस तरह बहू रानी में कार्यदक्षता और सुव्यवस्था रखने की बुद्धि नहीं है।

तीसरी कहावत 'पोपाबाई कुं राज्य छे' बुन्देलखण्ड में भी प्रचलित है। यह कहावत जितनी गुजरात में प्रचलित है उतनी ही एक दूसरी भी कहावत प्रचलित है :—

पुरी एक अँधेरी मां गंडु राजा।
टके शेर भाजी टके शेर खाजा॥

इस कहावत पर एक मनोरंजक कहानी भी है।

गुजराती कहावतों के विषय में अन्वेषण करते समय मुझे एक बात मालूम हुई है कि प्रायः प्रत्येक कहावत के साथ एक कहानी भी जुड़ी हुई है, जैसे वेद के सूत्रों को समझाने के लिए पौराणिक वार्त्ताओं की रचना हुई है।

—रविशंकर पाठक

नरसिंहजी की पोल,
बड़ौदा (गुजरात)।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उरद बाजार

'लोकवार्त्ता' के वर्ष १ अंक ३ में प्रकाशित गूजर की बेटी ऐलादी के पराक्रम-परायण लोकगीत में दो बार 'उरद बाज़ार' का उल्लेख है। (और उस गीत का एक नया पाठ यहाँ फिर प्रकाशित किया जा रहा है।—सम्पादक) । राजा का मतवाला हाथी उरद बाज़ार में ऐलादी की राह में आड़े आ जाता है। इस शब्द पर सम्पादक की टिप्पणी है—'उरद बाज़ार बुन्देलखंड के लोकगीतों में कई स्थलों पर आया है। हम उसके विषय में अभी कुछ नहीं कह सकते।' (पृष्ठ १६१)

हमारी सम्मति में 'उरद बाज़ार' शाही छावनी के बाज़ार के लिए प्रयुक्त होता था। लाक्षणिक रूप से 'राजमार्ग' या 'घंटा-पंथ' भी इसका अर्थ हो सकता है। 'उरद' तुर्की भाषा के 'उरदू' शब्द का तद्भव रूप है। उरदू का अर्थ फ़ौज या छावनी है। अंग्रेज़ी का होर्ड (Horde) शब्द तुर्की उरदू से ही निकला है। उर्दू भाषा के नाम में भी तुर्की का उरदू या उर्दू शब्द ही लिया गया है, क्योंकि इस भाषा का जन्म फौजी छावनी में काम-काज की सुविधा के लिए हुआ था। अकबर के सिक्कों पर एक ज़रब का नाम 'उर्दू ज़फ़र करीं' (विजयी स्कन्धावार) और जहाँगीर के सिक्कों पर 'उर्दू दर राहे दकन' (दक्खिन के मार्ग में शाही छावनी या पड़ाव) पाया गया है। हिन्दी का 'वर्दी' शब्द भी मूल में 'उर्दू' से ही सम्बद्ध है। दिल्ली का नाम किसी समय 'उर्दू-ए-मुअल्ला' (शाही छावनी) था। संभव है देशी भाषाओं में यही नाम 'उर्दू बाज़ार' या 'उरद बाज़ार' के रूप में प्रचलित हो गया हो। ऐलादी का पिता राजू गूजर दिल्ली के पास ही कहीं खिरक बनाकर रहता था। तभी तो पृथ्वीराज के हाथी से उरद बाज़ार में ऐलादी की मुठभेड़ हो गई। निस्सन्देह 'उरद बाज़ार' दिल्ली का दूसरा नाम तो रहा ही होगा। और भी शाही छावनियाँ इसी नाम से अभिहित होती होंगी।

प्रॉविन्शल म्यूज़ियम, लखनऊ

—वासुदेवशरण अग्रवाल

[विद्वद्वर डा० वासुदेवशरणजी अग्रवाल का अनुमान बिलकुल ही ठीक है। हमारा उस ओर ध्यान ही नहीं गया। हम यहाँ पर ऐलादी के इस गीत का एक दूसरा रूप प्रकाशित कर रहे हैं। पहला रूप लोकवार्त्ता के प्रथम वर्ष के तृतीय अंक में प्रकाशित हो चुका है। वहाँ पर उरद बाज़ार के साथ किसी स्थान विशेष का उल्लेख नहीं हुआ। किन्तु इस दूसरे रूप में तो बहुत ही स्पष्ट लिखा है :—

डिगरी तौ ऐलादी भुमानी मथरा माँझ हारा में हो-ओ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आगे मिले हाथी पिरथीराज के हो-श्रो ॥

इससे पता चलता है कि राजू गूजर मथुरा अथवा उसके आसपास के किसी स्थान का निवासी था।

यह नया पाठ हमें परिषद् के उत्साही कार्यकर्त्ता श्री रामस्वरूप जी योगी के प्रयत्न से प्राप्त हुआ है। उसके लिए हम उनके बड़े कृतज्ञ हैं। इस पाठ में कई विशेषताएँ हैं। वह पहले की अपेक्षा अधिक सम्पूर्ण है। उसमें राजू गूजर के जीवन का अधिक विशद वर्णन हमें देखने को मिलता है।

हम डा० अग्रवाल से प्रार्थना करेंगे कि इस गीत पर भाषाविज्ञान और इतिहास की दृष्टि से कुछ प्रकाश डालने की कृपा करें। उससे पाठकों का बड़ा लाभ होगा।—संपादक]

गीत या गोट का दूसरा रूप इस प्रकार है:—

हाथिन बाढ्यो कइये राजा पिरथीराज, भुवरन[1] बाढ्यो गूजरगढ़ राजौर हो।
बोले ऐलादी भुवानी अपने बाबुल सें रही बतराय हो—श्रो ॥
मोरे बाबुल खिरक तौ बँधा दै मथरा मांझ हारा में हो—श्रो।
बोलै गूजर कैसें रहो ऐलादी से बतराय हो—श्रो ॥
मोरें हलकौ नैयाँ बारो नैयाँ नैयाँ कुटुम परवाल हो—श्रो।
कौन के तौ भरोसें खिरक बँधा दऊँ मथरा माँझ हारा में हो—श्रो ॥
बोलै ऐलादी भुमानी राजू सें रही बतराय हो—श्रो।
हमई तौ तुमारें हलके कइये बारे हमई कुटुम परवाल हो—श्रो ॥
अरे जासें खिरक तौ बंधा दो मथरा माँझ हारा में हो—श्रो।
तब तौ गूजर दादा पाँवन पेरें फुल-पाँवडी सिर पै बाँधें लपेड़ा पाग हो—श्रो ॥
चम्पा बुदरिया हाथन लै लई डिगरत जावे काशी नगर शहर खाँ हो—श्रो
पढ़े पुराने पंडित ढूँढ़ रह्यो घरियां[2] पूँछें वे गढ़ राझौर कीं हो ॥
चलियो चलियो श्रो पंडित जी महराज मोरी गढ़ राजौर खाँ हो—श्रो
घरियाँ तो बतादो वे खिरक बँधा लऊँ मथरा माँझ हारा में हो—श्रो ॥
अब तो पंडित जी गूजर सें रहे बतराय हो—श्रो
सावन गरजै भदवाँ बरसै भर जैहै ताल पुखार हो—श्रो ॥

---

१ भुवरन=यह शब्द यहाँ लाक्षणिक अर्थ में भैंसों के लिए प्रयुक्त हुआ है। श्यामा गाय की तरह भूरी भैंस भी अच्छी मानी जाती है। २ घरियाँ=शुभ घड़ी।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

धरती फिर जैहै तोरी गूजर राजू गढ़ राजौर हो—ओ ।
जासें तोरी भुवरन खों कसालौ हुइहै गढ़ राजौर में हो—ओ ॥
खैर बमुरिया के जार कटवालै कटवालै कटंगी बांस हो—ओ ।
तब तौ घरियाँ सुदवा लईं राजू गूजर ने काशी नगर सें डिगरो आवे अपनी गढ़ राजौर हो—ओ ॥
खैर बमुरिया के जार तौ कटवा रओ कटवा रओ कटंगी बाँस हो—ओ ।
भुवरन कौ खिरक तौ बँधवा रओ मथरा माँझ हारा में हो—ओ ॥
भुवरें हाँकीं गूजर ने गढ़ राजौर सें तौ लै आयौ मथरा माँझ हार में हो—ओ ।
भुवरन के ब्याट[१] तौ पर गये राजू गूजर के मथरा माँझ हारा में हो—ओ ॥
तब तौ सात सौ मन की मटकी सिर धरें नौ सै पड़ला की दाबर[२] लयें दायनें हाथ हो—ओ ।
डिगरी तौ ऐलादी भुमानी मथरा माँझ हारा में हो—ओ ॥
सकरी खोरें कइये मथरा के उरद बाजार भरे तो आगें मिले हाथी पिरथीराय के हो—ओ ।
बोलै ऐलादी भुमानी वा घरियाँ माँवती[३] सें बतराय हो—ओ ॥
हाथी वारे मोरे भैया, मोरौ देवरा लगै कै जेठा हो—ओ ।
हाथी तौ हटा लै मथरा के उरद बाजार सें हो—ओ ॥
बोलै महावतिया ऐलादी भुमानी सें रइयौ बतराय हो—ओ ।
ना तौ मैं तुमरौ देवर लगौं तुमरौ ना लागौं जेठ हो—ओ ॥
धरम की बहिनियां ऐलादी भुमानी मोरी तुम होइयो हो—ओ ॥
तब तो माँवतियाँ रयो बतराय हो—ओ ॥
जे तौ हाथी कइये मद फिके सैंतिन[४] की माने न हूल हो—ओ ।
बगल होकें पड़ला ऐलादी बेटी ले जाइयो हो—ओ
मोरे पड़ला बिड़र भग बन खों जायें नौनें तो हाथी हटा ले,
जस बढ़ै, नईं जबरन लैहौं हटाय हो—ओ ॥
कही न मानी महावती नें वे मथरा के उरद बजार में हो—ओ ॥
आगें हाथी महावती ने मंगल गजराज खौं हाँकियों हो—ओ ।
तब तो दायनें पाँव के अँगूठा सें ऐलादी ने साँकर दै झटकी,
सकरी खोरें कइये मथरा के उरद बजार भरे तो

---

१ ब्याट=पशुओं की सन्तति बढ़ना । २ दाबर=डोर । ३ माँवती=महावत ।
४—सैतिन=अंकुश ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हाथी पटक लओ मथरा के उरद बजार में हो–ओ ॥
ठाँड़ौ तौ मावतिया बिनती कर रयौ ऐलादी सें उरद बजार में हो—ओ।
मैंने ना जानी बिटिया तैनें गूजर के घरै देवतन कौ धरौ औतार हो—ओ ॥
भागौ मावतिया जावै राजन दरबार में हो—ओ।
हाथन जोरै बिनती करै नै नै कैं करै परनाम हो—ओ ॥
अरे! तेरे तौ राज में ओ राजा तिरिया राज कर रईं सो हो—ओ।
तब तौ राजा पूँछै पिरथीराज वा घरियाँ भरे दरबार हो—ओ ॥
कै तो तेरौ हाथी सिर्रया[1] गयो कै रातब[2] गये बड़ाय हो—ओ।
कौन सी आफत तो पै पर गई ठाँढ़ो चैत चरेरै घाम सो हो—ओ ॥
मैंने राजन की छोड़ी नौकरी कर लैहौं लकरियाँ घास हो—ओ।
कै तौ नौकर हुइहौं जा कैं राजू गूजर के गढ़ राजौर में हो—ओ ॥
महाराज गूजर घर बिटिया जनमी बल की नइयाँ सँभार हो—ओ।
मान तौ घटा दये मोरे मंगल गजराज के वे तो मथरा जी के उरद बजार में हो—ओ ॥
इतनी सुनकें राजा पिरथीराज कौ दरबार रै गयौ सनाका[3] खाय हो—ओ।
तुरतई तौ छरिया[4] बुलवा लये राजा पिरथीराज नें हो—ओ ॥
जइयो तौ जइयो मथरा माँझें हार गूजर खौं पकर लै आइयो हो—ओ।
एक के कउतन दो गये, दो के कउतन चार, चार के कउतन सोरा गये, पौंचे मथरा माँझे हारा में हो—ओ ॥
चलियो चलियो ओ गूजर दादा ततपर राजन दरबार खौं हो—ओ।
तुमें तौ बुलौआ हो रये आज महाराज पिरथीराज के दरबार हो—ओ ॥
तब तौ गूजर ने पाँवन पैरीं फुलपाँवड़ी सिर पै बाँधी फुलपाग हो—ओ ॥
चम्पा बुदरिया हातन लै लई डिगरत जावै राजन दरबार खौं हो—ओ।
तब तौ गूजर पौंचो राजा के दरबार मुजरा कर रहौ राजा पिरथीराज सें हो—ओ ॥
ना तौ मैंने राजन की चोरी करीं ना मोरो भुवरन नें करे हैं भिकम[5] उजार हो—ओ।
काये खौं तौ आज मोय बुलौआ भये हैं भरे दरबार में हो—ओ ॥
तब तौ इतनी सुनके राजा गूजर सें रइयो बतराय हो—ओ ॥
नां तौ गूजर तैनें मोरी भूमैं जोतीं ना चाल्हर[6] नें करे भिकम उजार हो—ओ।

१—सिर्रया गयो = पागल हो गया, २—रातब = पशुओं का दाना चारा, ३—सनाका = सन्नाटा, ४—छरिया = छड़ीदार, ५—भिकम = भीष्म, बड़ा। ६ चाल्हर = ढोर।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तोरे घरै बिटिया बल आगरी जनमी बल कौ नइयाँ सँभार हो—ओ।
मान तौ घटा दये मोरे मंगल गजराज के मथरा माँझ उरद बाजार में हो—ओ।
सकरी खोरें मथरा के उरद बजार की हो—ओ।
हाथी गिरा दये—जासें बेटी कइये बल आगरी बल की नइयाँ समार हो—ओ।
सगाई तौ करदै मोरे संग में तेरौ जस बढ़ैं नई जबरई लैहों पकराय हो—ओ।
बोलै गूजर तुम तौ राजा कइयौ तीन लोक के जिनकौ नाव[1] धनी पिरथीराज हो—ओ।
मैं तो गूजर कइये जात कौ का बिटिया के माँगौ डाँड़[2] हो—ओ।
डाँड़ तो अनहौनों भरवाले हँकवाले भुवरियाँ मथरा मांझें हार सौं हो—ओ।
तब तो राजा पिरथीराज गूजर सें रइयो बतराय हो—ओ।
नौनें[3] सादी करैं जस बाढ़ै नहीं जबरई लैहों पकराय हो—ओ।
तब तो गूजर एक मास कौ बादौ[4] करकें डिगरी अपने मथरा माझें हार खों हो—ओ।
बैठौ तौ गूजर अनमनौं आनकें अपनी अथैयन[5] मँझार हो—ओ
बोलै ऐलादी की माता चोंढ़ा अपने कंथा सें रई बेर बेर बतराय हो—ओ।
कैसे आज स्वामी अनमने बैठे हो, का पर गई विपदा आय हो—ओ।
तब तो राजू गूजर अपनी तिरिया चोढ़ा सें रइयो बतराय हो—ओ।
कै तौ चोढ़ा तैं होती जनम खां बाँजटी[6] कै कूंखन[7] पथरा पर जाते हो—ओ।
कै होतन तौ बड़ेरौ[8] टूटतौ जा दिन ऐलादी मर जाती सो हो—ओ।
कै तौ ऐसी बिटिया होतनई मर जाती जी नें राजा सें रोपी रार हो—ओ।
घर छोड़ौं दौलत छोड़ौं छोड़ौं सारौ कुटुम परवाल हो—ओ।
भुवरें तो छोड़ौं डेढ़ लाख मैं मथरा मांझें हार में हो—ओ।
विपता कौ मारो गूजर एक दिन रइयो दो दिन रइयो अपने गढ़ राजौर में हो—ओ।
एक महीना कौ बादौ करकें गूजर नें जोरे ते अपने कुटुम परवाल हो—ओ।
जो भरकैं कइये पंच गूजर वे पौचें राजन के दरबार में हो—ओ।
हाथ जोर रये बिनती कर रये महाराज सें रये बतराय हो—ओ।
हम तौ कइये गूजर जात के तुम तौ राजा महाराज हो—ओ।

---

१ नाव=नाम। २ डाँड़=दंड। ३ नौने=अच्छी तरह। ४ बादौ=वायदा। ५ अथैयन=अथाई, घर के आगे बैठने का स्थान। ६ बाँजटी=बाँझ ७ कूँखन=कोख ८ बड़ेरौ=घर का छप्पर।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मरजी नां होवे ऐसी नाँ माँगो जे घरियाँ डाड़ हो—ओ।
कही न मानी पिरथीराज ने चलीं न गूजरन की एकऊ बात हो।
फिर तौ गूजर समझा रये राजू खौं आकें मथरा हार में हो—ओ।
धन चाहै राजा लै लेवै लै लेवै भुवरन के डाँड़ हो—ओ।
बेटी ना दियो अपनी ऐलादी राजा चाहै लाख कहै चौहान हो—ओ।
भुवरें छोड़ीं डेढ़ लाख अपनी मथरा माँझ हार में हो—ओ।
रातई उठकें भागौ राजू गूजर पराई भूम खौं हो—ओ।
तीनऊँ पिरानी संगे जावें गैलें पकरीं पराई भूम कीं हो—ओ।
तब तो गूजर राजू गैलन में विपदा भोगें दिन काटें आफत भोगत जायें हो—ओ;
माता चोढ़ा पीसै गाँव कौ पीसनौ ऐलादी बछेरू पड़ेरू चराउत जाय हो—ओ।
ऐसी तौ विपदा पर गई वे गूजर गढ़ राजौर के हो—ओ।
दिनाँ दसक की मजलैं करकें पीसत कूटत मजूरी करत पौचें मानां की हरियल सी झाँझ में हो—ओ।

राजा तो कइथे मानां लुहार जाँकौ[१] हो—ओ।
जीनें[२] अपने राज में इन तीनऊँ खौं लओ तो बसाय हो—ओ।

---

१ जाँकौ=जहाँ का। २ जीने=जिसने।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

निवेदन

अब तक 'लोकवार्त्ता' स्थानीय प्रेस में और हाथ के बने देशी कागज़ पर छपती थी। वह व्यवस्था देखने में सुन्दर थी। परंतु स्थायी नहीं थी। वर्त्तमान समय में छपाई की कला ने इतनी उन्नति कर ली है, और हिन्दी पाठकों की रुचि भी इस विषय में इतनी परिष्कृत हो गई है कि किसी भी पत्रिका की छपाई का स्वच्छ और सुन्दर होना अत्यन्त आवश्यक है।

इस नये प्रबंध में हमको बहुत विलंब लग गया। पाठक उसके लिए हमें क्षमा करें। यह अंक हमारी अनुपस्थिति में जल्दी में छपा है। संभव है पाठकों को उसमें त्रुटियाँ दृष्टिगोचर हों। परन्तु बुन्देलखंडी में एक कहावत है कि 'लड़के की आँखें छोटी हैं।' जवाब मिला कि 'उनको ही तो हमने खोद खोदकर निकाला है।' सो आज कल सभी जगह पत्र-पत्रिकाओं और पुस्तकों को बाहर के प्रेस में छपवाने में जो असुविधाएँ हो रही हैं उन्हें भुक्तभोगी ही जानते हैं। पाठक उसकी कल्पना नहीं कर सकते। जिनके अपने प्रेस हैं वे भी अपने पत्रों को समय पर प्रकाशित करने में असमर्थ हो रहे हैं। फिर इस विषय में हम तो परमुखापेक्षी हैं।

परंतु 'लोकवार्त्ता' की छपाई का अब उचित प्रबंध हो गया है। वह बराबर समय पर सुन्दर ढंग से प्रकाशित होगी।

यहाँ हम हिन्दी विश्व-भारती के मालिक श्रीराजराजेश्वरप्रसाद भार्गव को धन्यवाद देना चाहते हैं जिन्होंने 'लोकवार्त्ता' की छपाई का भार अपने प्रेस में लेकर इस विषय में हमें चिन्ता-मुक्त किया।

—प्रकाशक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लोकवार्त्ता

(१) 'लोकवार्त्ता' वर्ष में चार बार प्रकाशित होती है।

(२) उसका मुख्य उद्देश्य हिन्दी में लोकविज्ञान एवं लोकवार्त्ता शास्त्र के अध्ययन को प्रोत्साहन देना एवं सर्वसाधारण में तत्संबंधी ज्ञान का प्रचार करना है।

(३) उसमें अधिकतर साधारण जनता में प्रचलित रीति-रिवाजों, उत्सवों, धार्मिक विश्वासों, त्यौहारों, तथा लोक-साहित्य और लोक-कलाओं के विविध अंगों से संबंधित लेख प्रकाशित होंगे। पुरातत्त्व भी लोक-विज्ञान के अंतर्गत है। अतएव इस विषय के लेखों को उसमें उचित स्थान मिलेगा। केवल कविता अथवा कल्पना-मूलक लेख उसमें नहीं छपेंगे।

(४) लोकवार्त्ता का दृष्टिकोण शुद्ध सांस्कृतिक एवं वैज्ञानिक है। वह किसी प्रकार के वाद-विवाद में नहीं पड़ेगी और न किसी एकमत के समर्थन अथवा विरोध से उसका कोई संबंध होगा।

(५) लोकवार्त्ता का वार्षिक मूल्य ६) तथा एक प्रति १।।) है।

लेखकों से

'लोकवार्त्ता' में प्रकाशित होने के लिए जो लेख, ग्रामगीत, तथा रीति-रिवाजों के विवरण भेजे जायें, वे पूरे तथा प्रामाणिक होने चाहिए। संगृहीत सामग्री के विषय में यह बताना आवश्यक है कि कब, किस प्रकार और कहाँ से उसका संग्रह किया गया है। सब प्रकार का पत्र-व्यवहार नीचे लिखे पते से करना चाहिये।

सम्पादक—'लोकवार्त्ता'
टीकमगढ़
[मध्य भारत]

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

'लोकवार्त्ता' पर कुछ विद्वानों की चुनी हुई
सम्मतियाँ

माननीय सम्पूर्णानंदजी (भूतपूर्व शिक्षा-मन्त्री, युक्तप्रांत)

ऐसी पत्रिका प्रत्येक जनपद में प्रकाशित होनी चाहिए।

रायबहादुर महामहोपाध्याय गौरीशंकर हीराचंद ओझा

हिन्दी में अब तक ऐसा कोई पत्र नहीं था जिससे जनता के रहन-सहन, उत्सवों, संस्कारों आदि के विषय में समुचित अध्ययन किया जा सकता। इससे हिंदी साहित्य के एक ऐसे अंग की पूर्ति होगी जिस पर अब तक बहुत कम ध्यान दिया गया है।

Dr. Verrier Elwin, D. Sc. (Oxon), F. N. I., F. R. A. I.

I do most humbly congratulate you on this splendid enterprise and feel very proud to be associated with it.

* * * *

The march number of Lokvarta has arrived and I am full of admiration for punctuality and competence with which it is published.

Dr. R. N. Dandekar, M. A., PH. D.

A thorough and critical study of regional anthropology has been a desideratum and a perusal of the three issues of your journal convinces me that 'Lokvarta' which is being conducted on the right lines will adequately fill in the long felt gap in the field of Indology.

डा० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या, M. A., D. Lit.

'लोकवार्त्ता' भारतीय भाषाओं में प्रकाशित पत्र-पत्रिकाओं में अनोखी और निराली है।

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल M. A., Ph. D.

'लोकवार्त्ता' का प्रकाशन एक बड़ा शुभ लक्षण है।

श्री० माधवराव विनायक किबे, M. A. इंदौर

यह आपका प्रयत्न अत्यन्त महत्त्व का होकर ज्ञान-विवर्द्धक है। यह मौलिक है, एवम् उपकारक है।

मुद्रक—पं० भृगुराज भार्गव, भार्गव-प्रिंटिंग-वर्क्स, लाटूश रोड, लखनऊ